ओ३म्

ईश्वर के अस्तित्व की वैज्ञानिकता

('वेद विज्ञान आलोक:' से साभार उद्धृत)



लेखक – आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक
वैदिक वैज्ञानिक

महर्षि आद्य ब्रह्मा से ले कर..





.. दयानंद पर्यन्त आर्ष परंपरा

ओ३म्

ईश्वर के अस्तित्व की वैज्ञानिकता

लेखक – आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

संपादक – यशपाल आर्य

प्रकाशक – Arya Research Team

"मैं वैदिक विज्ञान के द्वारा एक अखंड, सुखी व समृद्ध भारत के निर्माण की आधारशिला रखने का प्रयास कर रहा हूँ, जिसमें प्रत्येक भारतीय तन, मन, विचारों व संस्कारों से विशुद्ध भारतीय होगा। उसके पास अपना विज्ञान वेदों, ऋषियों व देवों के प्राचीन विज्ञान पर आधारित एवं अपनी भाषा हिंदी व संस्कृत में होगा। उसे अपने पूर्वजों की प्रतिभा, चरित्र एवं संस्कारों पर गर्व होगा, उसे पाश्चात्य विद्वानों की बौद्धिक दासता से मुक्ति मिलेगी, जिससे लार्ड मैकाले का वर्तमान में साकार हो चुका स्वप्न ध्वस्त हो सकेगा। यह प्यारा राष्ट्र पुनः विश्वगुरु बन कर विश्व को शांति एवं आनंद का मार्ग दिखायेगा।

आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

अनुक्रमणिका

ओ३म्

भूमिका

हम ईश्वर तत्व पर निष्पक्ष वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करते हैं। हम संसार के समस्त ईश्वरवादियों से पूछना चाहते हैं कि क्या ईश्वर नाम का कोई पदार्थ इस सृष्टि में विद्यमान है, भी वा नही? जैसे कोई अज्ञानी व्यक्ति भी सूर्य, चन्द्र, पृथिवी, जल, वायु, अग्नि, तारे, आकाशगंगाओं, वनस्पति एवं प्राणियों के अस्तित्व पर कोई शंका नहीं करेगा, क्या वैसे ही इन सब वास्तविक पदार्थों के मूल निर्माता व संचालक ईश्वर तत्व पर सभी ईश्वरवादी शंका वा संदेह से रहित हैं? क्या संसार के विभिन्न पदार्थों का अस्तित्व व स्वरूप किसी की आस्था व विश्वास पर निर्भर करता है? यदि नहीं तब इन पदार्थों का निर्माता माने जाने वाला ईश्वर क्यों किसी की आस्था व विश्वास के आश्रय पर निर्भर है? हमारी आस्था न होने से क्या ईश्वर नहीं रहेगा? हमारी आस्था से संसार का कोई छोटे से छोटा पदार्थ भी न तो बन सकता है और न आस्था के समाप्त होने से किसी पदार्थ की सत्ता नष्ट हो सकती है, तब हमारी आस्थाओं से ईश्वर क्योंकर बन सकता है और क्यों हमारी आस्था समाप्त होने से ईश्वर मिट सकता है? क्या हमारी आस्था से सृष्टि के किसी भी पदार्थ का स्वरूप बदल सकता है? यदि नहीं, तो क्यों हम अपनी-२ आस्थाओं के कारण ईश्वर के रूप बदलने की बात कहते हैं? संसार की सभी भौतिक क्रियाओं के विषय में कहीं किसी का विरोध नहीं, कहीं आस्था, विश्वास की बैसाखी की आवश्यकता नहीं, तब क्यों ईश्वर को ऐसा दुर्बल व असहाय बना दिया, जो हमारी आस्थाओं में बंटा हुआ मानव और मानव के मध्य विरोध, हिंसा व द्वेष को बढ़ावा दे रहा है। हम सूर्य को एक मान सकते हैं, पृथिवी आदि लोकों, अपने-२ शरीरों को एक समान

मानकर आधुनिक भौतिक विद्याओं को मिलजुल कर पढ़ व पढ़ा सकते हैं, तब क्यों हम ईश्वर और उसके नियमों को एक समान मानकर परस्पर मिलजुल कर नहीं रह सकते? हम ईश्वर की बनाई हुई सृष्टि एवं उसके नियमों पर बिना किसी पूर्वाग्रह के संवाद व तर्क-वितर्क प्रेमपूर्वक करते हैं, तब क्यों इस सृष्टि के रचयिता ईश्वर तत्व पर किसी चर्चा, तर्क से घबराते हैं? क्यों किंचित् मतभेद होने मात्र से फतवे जारी करते हैं, आगजनी, हिंसा पर उतारू हो जाते हैं। क्या सृष्टि के निर्माता ईश्वर तत्व की सत्ता किसी की शंका व तर्क मात्र से हिल जायेगी, मिट जायेगी?

यदि ईश्वर तर्क, विज्ञान वा विरोधी पक्ष की आस्था व विश्वास तथा अपने पक्ष की अनास्था व अविश्वास से मिट जाता है, तब ऐसे ईश्वर का मूल्य ही क्या है? ऐसा परजीवी, दुर्बल, असहाय, ईश्वर की पूजा करने से क्या लाभ? उसे क्यों माना जाये? क्यों उस कल्पित ईश्वर और उसके नाम से प्रचलित कल्पित धर्मों में व्यर्थ माथापच्ची करके धन, समय व श्रम का अपव्यय किया जाये?

ईश्वरप्रसूत भौतिकी के नियम

मेरे प्रबुद्ध पाठकगण! जरा विचारें कि यदि ईश्वर नाम की कोई सत्ता वास्तव में संसार में विद्यमान है, तो वह हमारे विश्वास, आस्थाओं के सहारे जीवित नहीं रहेगी। वह सत्ता निरपेक्ष रूप से यथार्थ विज्ञान के द्वारा जानने योग्य भी होगी। उसका एक निश्चित स्वरूप होगाउसके निश्चित नियम होंगे। ईश्वर के भौतिक नियमों के विषय में Richard P. Feynman **का कथन है-**

“ We an imagine that this complicated array of moving things which constitutes ‘the world' is something like a great chess game being played by the gods, and we are observers of the game. We do not know what the rules of the games are, all we are allowed to do is to watch the playing. Of course, if we watch long enough, we may eventually watch on to a few rules. The rules of the game are whats we mean by fundamental physics. ”

(Lectures on Physics-Pg. 13)

इसका आशय यह है कि यह संसार निश्चित नियमों से बना व चल रहा है। वे नियम ईश्वर द्वारा बनाये गये हैं और वही उनको लागू करके संसार को बनाता व चलाता है। वैज्ञानिक उन असंख्य नियमों में से कुछ को जान भर सकते हैं, उन्हें बना वा लागू नहीं कर सकते। यहाँ फाइनमेन ने एक भारी भूल अवश्य कर दी, जो ‘God’ **के स्थान पर** ‘Gods’ **लिख दिया। यदि नियम बनाने वाले अनेक** ‘Gods’, **तो उन नियमों में सामंजस्य नहीं बैठेगा। सभी** ‘Gods’ **को समन्वित व नियन्त्रित**

करने वाला कोई 'Supreme God'** अर्थात् '**God'** की सत्ता अवश्य माननी होगी और मूलभूत भौतिकी के नियम बनाने वाला एक ही '**God'** होगा।**

अब हम विचारें कि उस 'God'** अर्थात् ईश्वर के भौतिक नियम ही मूलभूत भौतिक विज्ञान नाम से जाने जाते हैं। इसी विज्ञान पर सम्पूर्ण भौतिक विज्ञान, खगोल, रसायन, जीव, वनस्पति, भूगर्भ, इंजीनियरिंग, मेडिकल सायंस आदि सभी शाखाएं आश्रित हैं। मूलभूत भौतिकी के बिना संसार में विज्ञान का अस्तित्व ही सम्भव नहीं है। जब ईश्वर के भौतिक नियम जिनसे इस संसार को जाना जाता है, ब्रह्माण्ड भर के बुद्धिवादी प्राणी वा मनुष्यों के लिए समान हैं, तब उस ईश्वर को जानने के लिए आवश्यक उसी के बनाये आध्यात्मिक नियम अर्थात् अध्यात्म विज्ञान (जिसे प्रायः धर्म कहा जाता है) भी तो सभी मनुष्यों के लिए समान ही होंगे। आश्चर्य है कि इस साधारण तर्क को समझने की भी बुद्धि ईश्वरवादियों में नहीं रही, तब निश्चित ही यह उनकी कल्पनाप्रसूत ईश्वरीय धारणा व कल्पित उपासना-पूजा पद्धति का ही फल है, जहाँ सत्य के अन्वेषण की वैज्ञानिक मेधा कहीं पलायन कर गयी।**

ईश्वरवादी वैज्ञानिक केवल Feynman **ही नहीं हैअपितु अनेक प्रतिभाशाली वैज्ञानिक ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते रहे हैं व करते हैं। क्योंकि वर्तमान विज्ञान केवल प्रयोगों, प्रेक्षणों व गणितीय व्याख्याओं के सहारे ही जीता है और यही उसका स्वरूप भी है। इस कारण वह ईश्वर की व्याख्या इनके सहारे तो, नहीं कर सकता और न वह इसकी व्याख्या की इच्छा करता है। उधर** Stephen Hawing **ने तो** The Grand Design **पुस्तक में मानो संसार के सभी ईश्वरवादियों को मूर्ख समझकर निरर्थक व्यंग्य किये हैं। विज्ञान का नाम लेकर स्वयं अवैज्ञानिकता का ही परिचय दिया है। इस पुस्तक से पूर्व उन्हीं की पुस्तकों में वे ईश्वर की सत्ता स्वीकार करते हैं, फिर मानो**

अकस्मात् वे भारी खोज करके संसार में घोषणा करते हैं कि ईश्वर नाम की कोई सत्ता ब्रह्माण्ड में नहीं है। उधर आज संसार में ऐसा भयंकर पाप प्रवाह चल रहा है कि ईश्वरवादी कहाने वाले भी ऐसा व्यवहार कर रहे हैं, मानो उनके ऊपर ईश्वर नाम की कोई सत्ता न हो, वे अहंकारी मानव स्वयं को ही सर्वोच्च सत्ता की भांति व्यवहार का प्रदर्शन करते देखे जाते हैं। इस कारण हम संसार भर के वैज्ञानिक अनीश्वरवादियों व ईश्वरवादियों दोनों का ही आह्वान करना चाहेंगे कि वे ईश्वर की सत्ता पर खुले मस्तिष्क से विचार करने को उद्यत हो जाएं। आज अनेक ईश्वरवादी विद्वान् ईश्वरवादी वैज्ञानिकों के प्रमाण देते देखे वा सुने जाते हैं, परन्तु हम ईश्वरीय सत्ता का प्रमाण किसी वैज्ञानिक से लेना आवश्यक नहीं समझते। अब वह समय आयेगा जब वर्तमान वैज्ञानिक हम वैदिक वैज्ञानिकों को प्रमाण मानना प्रारम्भ करके नये वैज्ञानिक युग का सूत्रपात करेंगे अर्थात् हमारे साथ मिलकर कार्य करेंगे। हम आज विश्वभर के समस्त प्रबुद्ध समाज से घोषणापूर्वक कहना चाहेंगे कि यदि ईश्वर नहीं है, तो सब झंझट छोड़कर नितान्त नास्तिक व स्वच्छन्द बन जाएँ और यदि ईश्वर सिद्ध होता है, तो उसकी आज्ञा में चलकर मर्यादित जीवन जीते हुये संसार को सुखी बनाने का प्रयत्न करें, क्योंकि सम्पूर्ण संसार उसी ईश्वर की रचना है और इस कारण सभी मानव ही नहीं, अपितु प्राणिमात्र परस्पर भाई-२ हैं।

ईश्वर के अस्तित्व पर नये सिरे से विचार

अब हम ईश्वर के अस्तित्व पर नये सिरे से विचार करते हैं

हमने अब तक वैज्ञानिकों से जो भी चर्चा सृष्टि विज्ञान पर की है, उससे एक विचार यह सामने आता है कि वैज्ञानिक 'क्यों' प्रश्न का उत्तर नहीं देते क्योंकि उनकी दृष्टि में यह विज्ञान का विषय नहीं है। हम संसार में नाना स्तरों पर निम्न प्रश्नवाचक शब्दों का सामना करते हैं

1. क्यों
2. किसने
3. किसके लिए
4. क्या
5. कैसे आदि

इन प्रश्नों में से 'क्या', 'कैसे' के उत्तर के विषय में वर्तमान विज्ञान विचार करने का प्रयास करता प्रतीत हो रहा है। यद्यपि इन दोनों ही प्रश्नों का पूर्ण समाधान तो विज्ञान के पास नहीं परन्तु प्रयास अवश्य ईमानदारी से हो रहा है। अन्य प्रश्न 'क्या', 'किसने' एवं 'किसके लिए' इन तीन प्रश्नों के विषय में विचार करना भी आधुनिक विज्ञान के लिए किंचिदपि रुचि का विषय नहीं है। हम इन प्रश्नों के आशय पर क्रमशः विचार करते हैं-

- **क्यों-** यह प्रश्न प्रयोजन की खोज के लिए प्रेरित करता है। हम निःसन्देह सारे जीवन नाना प्रकार के कर्मों को करते एवं नाना द्रव्यों का संग्रह करते हैं। इन सबका कोई न कोई प्रयोजन अवश्य होता है। कोई भी बुद्धिमान् प्राणी किसी न किसी प्रयोजन हेतु ही कोई प्रवृत्ति रखता है। मूर्ख मनुष्य भले ही निष्प्रयोजन कर्मों में प्रवृत्त रहता हो, बुद्धिमान् तो कदापि ऐसा नहीं करेगा। संसार पर विचार करें कि यह क्यों बना व क्यों संचालित हो रहा है? इसकी प्रत्येक गतिविधि का कोई न कोई प्रयोजन अवश्य है। 'क्यों' प्रश्न की उपेक्षा करने वाला कोई वैज्ञानिक क्या यह मानता है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड निष्प्रयोजन रचना है? हमारे विचार से प्रत्येक मनुष्य को सर्वप्रथम 'क्यों' प्रश्न का उत्तर ही खोजने का यत्न करना चाहिये। जिस प्रकार वह कोई कर्म करने से पूर्व उसका प्रयोजन जानता है, उसी प्रकार इस सृष्टि के उत्पन्न होने, किसी शरीरधारी के जन्म लेने का प्रयोजन जानने का भी प्रयत्न करना चाहिये। वर्तमान विज्ञान के इस प्रश्न से दूर रहने से ही आज वह अनेकों अनुसन्धान करते हुए भी उनके प्रयोजनव दुष्प्रभाव पर विचार नहीं करता है। इसी कारण मानव को अपने विविध क्रियाकलापों, यहाँ तक कि जीने के भी प्रयोजन का ज्ञान नहीं होने से भोगों की अति तृष्णा में भटकता हुआ अशान्ति व दुःखों के जाल में फंसता जा रहा है।
- **किसने-** यह प्रश्न 'क्यों' से जुड़ा हुआ है। कोई कार्य किस प्रयोजन के लिए हो रहा है, इसके साथ ही इससे जुड़ा हुआ अन्य प्रश्न यह भी उपस्थित होता है कि उस कार्य को किसने सम्पन्न किया अथवा कौन सम्पन्न रहा है अर्थात् उसका प्रायोजक कौन है? इस सृष्टि की प्रत्येक क्रिया का एक निश्चित प्रयोजन है, साथ ही उसका प्रायोजक कोई चेतन तत्व है। कोई जड़ पदार्थ प्रायोजक नहीं होता। जड़ पदार्थ प्रयोजन की सामग्री तो बन सकता है परन्तु उसका कर्त्ता अर्थात् प्रायोजक नहीं। चेतन तत्व ही जड़ तत्व पर साम्राज्य व नियन्त्रण

करता है। चेतन तत्व स्वतन्त्र होने से कर्त्तापन का अधिकारी है, जबकि जड़ पदार्थ स्वतन्त्र नहीं होने से कर्तृत्व सम्पन्न नहीं हो सकता।

- किसके लिए- यह प्रश्न इस बात का विचार करता है कि किसी कर्ता ने कोई कार्य किया वा कर रहा है, तो क्या वह कार्य स्वयं के लिए किया वा कर रहा है अथवा अन्य किसी चेतन तत्व के लिए कर रहा है? यहाँ कोई उपभोक्ता होगा और उपभोक्ता भी चेतन ही होता है। जड़ पदार्थ कभी भी न तो स्वयं का उपभोग कर सकता है और न वह दूसरे जड़ पदार्थों का उपभोग कर सकता है।
- क्या- यह प्रश्न पदार्थ के स्वरूप की पूर्णतः व्याख्या करता है। जगत् क्या है? इसका स्वरूप क्या है? मूल कण क्या हैं? ऊर्जा व द्रव्य क्या है? बल क्या है? इन सब प्रश्नों का समाधान इस क्षेत्र का विषय है। वर्तमान विज्ञान तथा दर्शन शास्त्र दोनों इस प्रश्न का उत्तर देने का यथासम्भव प्रयास करते हैं। इसका क्षेत्र बहुत व्यापक है। वर्तमान विज्ञान इस प्रश्न का सम्पूर्ण उत्तर देने में समर्थ नहीं है। जहाँ विज्ञान असमर्थ हो जाता है, वहाँ वैदिक विज्ञान किंवा दर्शन शास्त्र इसका उत्तर देता है।
- कैसे- कोई भी क्रिया कैसे सम्पन्न होती है? जगत् कैसे बना है? द्रव्य व ऊर्जा कैसे व्यवहार करते हैं? बल कैसे कार्य करता है? इन सभी प्रश्नों का समाधान इस क्षेत्र का विषय है। वर्तमान विज्ञान इस क्षेत्र में कार्य करता है परन्तु इसका भी पूर्ण सन्तोषप्रद उत्तर इसके पास नहीं है। अन्य प्रश्नों के उत्तर जाने बिना इसका सन्तोषप्रद उत्तर मिल भी नहीं सकता।

इन पांच प्रश्नों के अतिरिक्त अन्य कुछ प्रश्न भी हैं, जिनका समायोजन इन पांचों प्रश्नों में ही प्रायः हो सकता है ।

अब हम सृष्टि उत्पत्ति के सन्दर्भ में क्यों व किसने प्रश्नों पर क्रमशः विचार करते हैं

(क) Big Bang Theory के सन्दर्भ में -

पूर्वोक्त Big Bang Theory **में अनेक प्रश्न निम्नानुसार उपस्थित हैं-**

- **अनन्त सघन व अनन्त तापयुक्त शून्य आयतन वाले पदार्थ में अकस्मात् विस्फोट क्यों हुआ तथा इसे किसने किया?**
- **यदि** Steven Weinberg **के** Big Bang **पर विचार करें तो, वहाँ भी क्यों व किसने प्रश्न उपस्थित होंगे ही। यदि चेतन नियन्त्रक सत्ता को स्वीकार किया जाये, तो कहा जा सकता है कि उसने किया और जीवों के उपयोग में आने योग्य बुद्धिमत्तापूर्ण सृष्टि का निर्माण करने के लिए विस्फोट किया परन्तु अनीश्वरवादी इसका उत्तर कभी नहीं दे सकते। एक वैज्ञानिक ने मुझसे पूछा कि यदि ईश्वर मानें, तो भी यह प्रश्न उठेगा कि ईश्वर ने अकस्मात् आज से लगभग 13.6 अरब वर्ष पूर्व ही क्यों विस्फोट किया? तो इसके उत्तर में ईश्वरवादी तो उचित उत्तर दे सकता है। चेतन तत्व इच्छा व ज्ञान शक्ति से सम्पन्न होता है। वह किसी कार्य का समय व प्रयोजन अपनी बुद्धि से निश्चित कर सकता है। कोई चिड़िया पेड़ से अमुक समय पर क्यों उड़ी? मैं अमुक समय पर अमुक कार्य क्यों करने बैठा? मैं भूख लगने पर भोजन करूँ वा नहीं करूँ, यह मेरी इच्छा व विवेक का विषय है, यहाँ 'क्यों' प्रश्न उचित नहीं है परन्तु वृक्ष से पत्ता क्यों गिरा? बादल अभी क्यों बरसने लगे, पानी नीचे की ओर क्यों बह रहा है? इन प्रश्नों का उत्तर अवश्य देने योग्य है। यहाँ इच्छा एवं विवेक नहीं है।**

इस कारण ईश्वरवादी Big Bang के समय व प्रयोजन के औचित्य को सिद्ध कर सकता है, अनीश्वरवादी कभी नहीं। मेरे यह कहने का प्रयोजन यह नहीं है कि ईश्वर के द्वारा Big Bang सम्भव है अर्थात् यदि बिग बैंग थ्योरिस्ट ईश्वर की सत्ता को मान लें, तो Big Bang Theory सत्य हो सकती है। नहीं, ईश्वर तत्व भी वर्तमान वैज्ञानिकों वाले Big Bang को सम्पन्न नहीं कर सकता है। Big Bang कैसे होता है? इसका समाधान ईश्वरवाद से भी नहीं मिल सकता है। ईश्वर भी अपने नियमों अर्थात् मूलभूत भौतिकी के नियमों के विरुद्ध कार्य नहीं कर सकता। हमने Big Bang Theory की समीक्षा में दर्शाया है[1] कि इस थ्योरी में भौतिकी के कितने मूलभूत नियमों का उल्लंघन होता है? हाँ, यदि किसी लोक में विस्फोट माना जाये, वह लोक भी अनादि न माना जाये, साथ ही भौतिकी के पूर्वोत नियमों का उल्लंघन न हो, तब ईश्वर द्वारा विस्फोट किया जा सकता है परन्तु उस एक विस्फोट से ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का निर्माण होना सम्भव नहीं है। शून्य से ईश्वर भी सृष्टि की रचना नहीं कर सकता है। सृष्टि रचना के लिए अनादि जड़ उपादान कारण की आवश्यकता अवश्य होती है परन्तु जड़ पदार्थ में स्वयं गति, क्रिया नहीं होती, इस कारण इन्हें उत्पन्न करने में ईश्वर की भूमिका अवश्य होती है। अनन्त पदार्थ (अनन्त तापअनन्त द्रव्यमान) से सान्त ऊर्जा व सान्त द्रव्यमान वाले ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति क्यों होती है? इसका उत्तर अनीश्वरवादी नहीं दे सकता, जबकि ईश्वरवादी इसका उत्तर देते हुए कह सकता है कि ईश्वर अपने प्रयोजनानुसार अनन्त पदार्थ से कुछ पदार्थ को उपयोग में लाकर ब्रह्माण्ड की रचना कर सकता है। जिस प्रकार लोक में कोई व्यक्ति पदार्थ विशेष से कुछ भाग लेकर अपनी इच्छा का प्रयोजनानुसार किसी वस्तु विशेष का निर्माण करने के लिए स्वतंत्र है, उसकी इच्छा वा प्रयोजन पर कोई अन्य व्यक्ति प्रश्न

---

[1] Big Bang पर आचार्य जी की समीक्षा आप वेद विज्ञान अलोक ग्रन्थ में पढ़ सकते हैं वा vaidic physics youtube channel पर वीडियो देख सकते हैं।

उपस्थित नहीं कर सकता, उसी प्रकार अनन्त पदार्थ से कुछ पदार्थ लेकर परमात्मा सान्त द्रव्यमान व ऊर्जा वाले ब्रह्माण्ड की रचना करता है। हम इस पर यह प्रश्न नहीं कर सकते कि उसके अनन्त पदार्थ का शेष भाग का उपयोग क्यों नहीं किया अथवा अनन्त द्रव्यमान वा ऊर्जा से युक्त ब्रह्माण्ड क्यों नहीं बनाया? वैसे अभी तो यह भी प्रश्न अनुत्तरित है कि ब्रह्माण्ड सान्त है वा अनन्त? हमारी दृष्टि में ब्रह्माण्ड ईश्वर की अपेक्षा सान्त तथा हमारी अपेक्षा अनन्त है। हम जिस पदार्थ को ऐसा समझते हैं कि वह ब्रह्माण्ड बनाने में काम में नहीं आया, वह हमारी अल्पज्ञता ही है। वस्तुतः जो पदार्थ ऐसा है, वह भी ब्रह्माण्ड के संचालन आदि में परोक्ष भूमिका निभाता है। वह पदार्थ ही प्राण, मन, छन्द व मूल प्रकृति के रूप में विद्यमान रहता है। दूसरी बात यह भी है कि प्रारम्भ में द्रव्यमान, ऊर्जा जैसे लक्षण विद्यमान ही नहीं होते।

- दूर बिखरता हुआ पदार्थ संघनित होना कैसे प्रारम्भ करता है? अनीश्वरवादी दूर भागते हुए पदार्थ के संघनित होने का यथार्थ कारण नहीं बता सकता परन्तु ईश्वरवादी इसका इस प्रकार समाधान कर सकता है कि दूर भागते हुए पदार्थ को ईश्वर सृष्टि सृजन हेतु उससे सूक्ष्म तरंग रूप शक्तिशाली पदार्थ के द्वारा रोककर संघनित कर सकता है अर्थात् संघनन की प्रक्रिया प्रारम्भ कर सकता है।

(ख)Eternal Universe

इस मत पर हमने एकमात्र प्रश्न यह उठाया था कि कोई भी कण वा क्वाण्टा, जिसमें किसी भी प्रकार का बल अथवा क्रिया विद्यमान होती है, वह अनादि नहीं हो सकता। साथ ही हमने यह भी कहा था कि जो पदार्थ किसी अन्य सूक्ष्मतर पदार्थ के संयोग से बना है, वह अनादि नहीं हो

सकता। इसका कारण भी हम इस सिद्धान्त की समीक्षा के समय बतला चुके हैं। अब हम सृष्टि के अनादित्व पर कुछ अन्य ढंग से विचार करते हैं क्या गति अनादि है- 'सृष्टि' शब्द का अर्थ है-"नाना पदार्थों के बुद्धिपूर्वक - मेल से नवीन-२ पदार्थों की उत्पत्ति का होना'' इस मेल की क्रिया में बल और गति का होना अनिवार्य है। प्रश्न यह है कि क्या जड़ पदार्थ में स्वयं बल अथवा गति का होना सम्भव है? इस सृष्टि में जो भी बल व गति दिखाई पड़ रहे हैं, क्या वे मूलतः उसके अपने ही हैं? इस विषय में महर्षि वेदव्यास का कथन है- 'प्रवृत्तेश्च (अनुपपत्तेः)' (ब्र.सू.२.२.२) अर्थात् जड़ पदार्थ में स्वतः कोई क्रिया व गति आदि नहीं हो सकती। उसमें गति व क्रिया को उत्पन्न करने वाला कोई चेतन तत्व अवश्य होता है। हम अपने चतुर्दिक नाना प्रकार की गतियां निरन्तर देखते हैं, जिनमें से किन्हीं वस्तुओं को गति देने वाला चालक दिखाई देता है, तो किन्हीं गतियों का चालक दिखाई नहीं देता। अब हम विचार करते हैं कि कौन-२ से पदार्थ हैं, जिनका चालक दिखाई नहीं देता और कौन-२ से पदार्थ ऐसे हैं, जिनका चालक दिखाई देता है, किंवा दिखाई दे सकता है। हम बस, रेलगाड़ी, कार आदि वाहनों के चालक को प्रत्यक्ष देखते हैं, उनकी इच्छा वा प्रयत्न आदि क्रियाओं को अनुभव करते हैं। हम वाहन की गति को प्रारम्भ करने वाले चेतन वाहन चालक को देखते हैं परन्तु वाहन के इंजन में हो रही क्रियाओं को मात्र ईंधन से उत्पन्न मान लेते हैं। ईंधन वा उससे उत्पन्न ऊर्जा वाहन को कैसे गति देती है, विद्युत बड़े-२ यन्त्रों को कैसे चलाती है, विद्युत चुम्बकीय बल कैसे कार्य करते हैं, ऊर्जा व बल क्या है? इन प्रश्नों का हमें स्पष्ट ज्ञान नहीं है। वर्तमान वैज्ञानिक भी इस बात को स्वीकार करते हैं। Richard P. Feynman लिखते हैं

> "It is important to realize that in physics today, we have no knowledge of what energy is."
>
> (Lectures on Physics- P. **40**)

"If you insist upon a precise definition of force you will never get it."

(id. P. **147)**

"Why things remains in motion when they are moving or why there is a law of gravitation was, of course not known."

(id. P.**15)**

इससे यह स्पष्ट होता है कि आधुनिक भौतिक विज्ञान बल एवं ऊर्जा को ठीक-२ समझ नहीं पा रहा है। वे कैसे कार्य करते हैं, यह अज्ञात है। सूक्ष्म परमाणुअणु अथवा तरंगें कैसे सतत चल रही हैं? यह भी सर्वथा अज्ञात है। Feynman **की यह स्पष्ट स्वीकारोक्ति सराहनीय है। वस्तुतः वर्तमान विज्ञान की कार्यशैली की एक सीमा होती है।** Science **शब्द का अर्थ करते हुए** Chambers Dictionary **में लिखा है-**

"Knowledge ascertained by observation and experiment, critically tested, systematized and brought under general principles, esp in relation to the physical world, a department or a branch of such knowledge or study."

Oxford advanced learners dictionary **के** Indian Edition **में** Science **का अर्थ इस प्रकार किया है-**

"Organized knowledge esp when obtained by observation and testing of facts, about the physical world, natural laws."

इन दोनों परिभाषाओं से स्पष्ट है कि भौतिक जगत् का जो ज्ञान प्रयोगों, प्रेक्षणों और विविध परीक्षणों से सुपरीक्षित एवं व्यवस्थित होता है, वह आधुनिक विज्ञान की सीमा में माना जाता है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि हमारे पास परीक्षण के जितने अधिक साधन उपलब्ध हों, हमारा विज्ञान उतना अधिक परीक्षण करके सृष्टि के पदार्थों को जान सकता है। अपने तकनीकी साधनों की सीमा के बाहर विद्यमान कोई भी पदार्थ, चाहे कितना भी यथार्थ क्यों न हो, उसे विज्ञान स्वीकार नहीं कर सकता। पश्चिमी देशों के विज्ञान को आइजक न्यूटन से पूर्व गुरुत्वाकर्षण बल का पता नहीं था, गैलीलियो एवं कॉपरनिकस के पूर्व पृथिवी के आकार व परिक्रमण का ज्ञान नहीं था, तब तक उनके लिए गुरुत्वाकर्षण बल, पृथिवी का गोलाकार होना तथा सूर्य के चारों ओर परिक्रमण करना आदि विषय विज्ञान के क्षेत्र में नहीं आते थे अर्थात् ये सभी तथ्य कल्पनामात्र थे। परन्तु जब इन वैज्ञानिकों ने इन पर प्रेक्षण व प्रयोग, तो ये सभी तथ्य वैज्ञानिक सत्य रूप में प्रतिष्ठित हो गये। आज संसार में जो भी नये-२ आविष्कार हो रहे हैं, वे अब से पूर्व कल्पना के विषय थे परन्तु अब विज्ञान व तकनीक बन गये। इसी कारण कहा जाता है कि विज्ञान परिवर्तनशील है। इसे वर्तमान विज्ञान की विशेषता कहें वा अपूर्णता, यह वैज्ञानिकों को स्वयं विचारना चाहिये। मैं सूर्य को देख पाऊँ वा नहीं, इससे सूर्य और उसके विज्ञान में कोई परिवर्तन नहीं आयेगा, तब मैं इसे अपने प्रेक्षणों व प्रयोगों की सीमा में कठोरतापूर्वक क्यों बांधने का हठ करूँ? स्थूल रूप से ज्ञान के दो क्षेत्र हैं। एक वह है, जिसके प्रेक्षण व प्रयोग की तकनीक वर्तमान में उपलब्ध हैं, दूसरा वह है, जिसके प्रयोग व परीक्षण की तकनीक मनुष्य द्वारा विकसित किये जाने की सम्भावना हो सकती है। इसके अतिरिक्त ज्ञान का एक क्षेत्र ऐसा भी है, जिसका प्रयोग व परीक्षण किसी तकनीक से सम्भव नहीं, बल्कि जिसे योग साधनाजन्य दिव्यदृष्टि से ही जाना जा सकता है। इन तीनों प्रकार के ज्ञान में उचित तर्क का होना अनिवार्य है। जो बात सामान्य सुतर्क तथा ऊहा की दृष्टि से ही असम्भव प्रतीत

हो, वह उपर्युक्त तीनों प्रकार के ज्ञान में से एक भी ज्ञान के क्षेत्र में नहीं आयेगी। यहाँ ऊहा व तर्क का यथार्थ आशय भी गम्भीर विचारक ही जान सकते हैं, सामान्य व्यक्ति नहीं। जिस-२ व्यक्ति की प्रतिभा, साधना जितनी-२ अधिक होगी, उस उसकी तर्क व ऊहा शक्ति उतनी-२ अधिक यथार्थ होगी। इस कारण वर्तमान विज्ञान को अपने क्षेत्र के बाहर जाकर सुतर्क व ऊहा की दृष्टि से भी विचारना चाहिये। यदि कोई सज्जन यह कहे कि सुतर्क व ऊहा का विज्ञान के क्षेत्र में कोई महत्व नहीं है, मैं उस सज्जन को कहना चाहूंगा कि विज्ञान का जन्म सुतर्क एवं ऊहा रूप दर्शन से ही होता है और जहाँ विज्ञान का सामर्थ्य वा क्षेत्र समाप्त हो जाता है, वहाँ उसकी समाप्ति सुतर्क व ऊहा रूप दर्शन में ही होती है किंवा विज्ञान की चरम सीमा से परे दर्शन की सीमा पुनः प्रारम्भ होती है।

दर्शन व वैदिक विज्ञान

जब न्यूटन ने सेब के फल को वृक्ष से नीचे गिरते देखा था, उस समय उसके मन में इस ऊहा व तर्क की उत्पत्ति हुई कि सेब नीचे ही क्यों गिरा? उनके इसी विचार से गुरुत्वाकर्षण की खोज और एतदर्थ किये प्रयोग, परीक्षण व प्रयोगों की नींव रखी गयी। सेब गिरते अनेक लोग देखते हैं वा उस समय भी देखते थे परन्तु यह विचार न्यूटन के मस्तिष्क में ही आया, क्योंकि वे तर्क व ऊहा से संपन्न व्यक्ति थे। दर्शन को आंग्ल भाषा में Philosophy कहा जाता है, जिसकी परिभाषा करते हुए Chambers Dictionary में लिखा है-

> "In pursuit of wisdom and knowledge, investigation contemplation of the nature of being knowledge of the causes and laws of all things. The principles Underlying any sphere of knowledge, reasoning."

Oxford Advanced Learners dictionary में इसे इस प्रकार परिभाषित किया है-

> "Search for knowledge and understanding of the nature and meaning of the Universe and humanlife."

आज सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में विद्यमान विभिन्न वस्तुओं, उनके कारण तथा कार्य करने के सिद्धांतों आदि को तर्क व ऊहा के आधार पर जानने का प्रयत्न करना ही दर्शन कहलाता है। इससे स्पष्ट होता है कि विज्ञान व दर्शन दोनों का उद्देश्य ब्रह्माण्ड को जानने का प्रयास करना है। दोनों प्रक्रियाओं में

कुछ भेद अवश्य है परन्तु दोनों का उद्देश्य समान है। विज्ञान का क्षेत्र मानव तकनीक के सामर्थ्य तक सीमित है और दर्शन का क्षेत्र चिन्तन, मनन, ऊहा की सीमाओं तक फैला है। कहीं विज्ञान प्रेक्षणादि कर्मों की विद्यमानता में भी मूल कारण वा नियमादि विषयों में भ्रमित हो सकता है, तो कहीं दर्शन भी दार्शनिकों (विशेषकर परम सिद्ध योगियों के अतिरिक्त) की कल्पनाओं के वेग में बहकर भ्रांत हो सकता है। हमें दोनों ही विधाओं का विवेक सम्मत उपयोग करने का प्रयत्न करना चाहिये। अब हम विज्ञान व दर्शन की सीमा और समन्वय को दर्शाते हुए सृष्टि के एक नियम पर विचार करते हैं। जब हम इस बात पर विचार करते हैं कि एक धनावेशित वस्तु दूसरी ऋणावेशित वस्तु को क्यों आकर्षित करती है? तब इस ज्ञान की प्रक्रिया में सर्वप्रथम हमें यह अनुभव होता है कि विपरीत आवेश वाली कोई भी वस्तु एक-दूसरे को आकर्षित करती हैं। यहाँ आकर्षण बल है, तो उसका कारण भी होगा, यह विचार करना दर्शन का क्षेत्र है। कोई दो वस्तुएं परस्पर निकट आ रही हैं, तब उनके मध्य कोई आकर्षण बल कार्य कर रहा होगा, यह जानना भी दर्शन का क्षेत्र है। अब उन आकर्षित हो रही वस्तुओं पर विपरीत वैद्युत आवेश है, यह बताना विज्ञान का कार्य है। यह आवेश कैसे काम करता है? यह बताना भी विज्ञान का कार्य है। वर्तमान विज्ञान ने जाना कि जब दो विपरीत आवेश वाले कण जब निकट आते हैं, तब उनके मध्य Virtual Photons उत्पन्न और संचरित होने लगते हैं। ये Particles (Photons) ही आकर्षण बल का कारण बनते हैं। ये Particles वर्तमान विज्ञान के मत में उन दोनों कणों के मध्य विद्यमान Space को संकुचित करके उन कणों को परस्पर निकट लाने का कार्य करते हैं। इस प्रक्रिया को जानना विज्ञान का काम है। कदाचित् वर्तमान विज्ञान की सीमा यहाँ समाप्त हो जाती है। इसके आगे दर्शन वा वैदिक विज्ञान की सीमा प्रारम्भ होती है।

जब मैं पूछता हूँ कि धन व ऋण वैद्युत आवेशयुक्त कणों के परस्पर निकट आते ही Virtual Particles कहाँ से व क्यों प्रकट हो जाते हैं? तब वैज्ञानिक उत्तर देते हैं कि इसका उत्तर हम नहीं जानते। जहाँ वर्तमान विज्ञान के पास उत्तर नहीं मिलता, वहाँ वैदिक विज्ञान वा दर्शन उत्तर देता है। यह उत्तर वैदिक ऋषियों वा वेद के महान् विज्ञान से मिलेगा, जिसे हम किसी पृथक् पुस्तक में स्पष्ट करेंगे। यहाँ हम कहना यह चाहते हैं कि वर्तमान विज्ञान किसी बल के कार्य करने की प्रक्रिया को बतलाता है, जबकि वैदिक विज्ञान किंवा दर्शन उसके आगे जाकर यह बतलाते हैं कि वह बल की प्रक्रिया क्यों हो रही है और मूल प्रेरक बल क्या है? वहाँ हम यह सिद्ध करेंगे कि सभी जड़ बलों का मूल प्रेरक बल चेतन परमात्म तत्व का बल है। यहाँ वर्तमान विज्ञान न तो हमारे प्रश्नों का उत्तर देता है और न ईश्वर तत्व के मूल प्रेरक बल की सत्ता को ही स्वीकार करता है। यह दुराग्रह किसी भी वैज्ञानिक के लिए उचित नहीं है। उसे या तो समस्याओं का समाधान करना चाहिये अथवा वैदिक वैज्ञानिकों से समाधान पूछना चाहिए।

यहाँ हम चर्चा कर रहे थे कि ब्रह्माण्ड में आधुनिक विज्ञान द्वारा माने जाने वाले मूलकण अनादि नहीं हो सकते और तब उनमें होने वाली किसी भी प्रकार की क्रिया वा गति भी अनादि नहीं हो सकती। यदि कोई यह हठ करे कि मान लीजिये कि मूलकण प्राणादि सूक्ष्म पदार्थ वा प्रकृति रूप सूक्ष्मतम पदार्थ से बने हैं, तब भी उस सूक्ष्म वा सूक्ष्मतम कारण पदार्थ में गति अनादि क्यों नहीं हो सकती? क्यों इसके लिए चेतन ईश्वर तत्व की आवश्यकता होती है?

इस विषय पर हम इस प्रकार विचार करते हैं-

इस सृष्टि में जो भी गति एवं बल का अस्तित्व है, वह पदार्थ की सूक्ष्मतम अवस्था तक प्रभावी होता है। पदार्थ के अणुओं में होने वाली कोई भी क्रिया, बल आदि का प्रभाव उसमें विद्यमान आयन्स

तक होता है। आयन्स में होने वाली प्रत्येक गति व बल आदि का प्रभाव वा सम्बन्ध इलेक्ट्रॉन्स, प्रोटोन्स, न्यूट्रॉन्स वा क्वार्स व ग्लूआन्स तक होता है। हमारा विश्वास है कि वर्तमान विज्ञान भी इसे मिथ्या नहीं कहेगा। इन सूक्ष्म कणों की संरचना व स्वरूप के विषय में वर्तमान विज्ञान अनभिज्ञ है, इस कारण इनमें होने वाली गति, क्रिया, बल आदि के प्रभाव की व्यापकता के विषय में वह अनभिज्ञ है। यह प्रभाव प्राण, मन व वाक् तत्वों तक व्याप्त होता है, जो मूल प्रकृति व ईश्वर में समाप्त हो जाता है। वस्तुतः ईश्वर तत्व में कोई क्रिया नहीं होती और प्रकृति में क्रिया ईश्वरीय प्रेरणा से होती है, परन्तु उससे प्रकृति का मूल स्वरूप परिवर्तित हो जाता है। यह सब ज्ञान वर्तमान विज्ञान या तकनीक के द्वारा होना सम्भव नहीं है। गति व बल की व्याप्ति के पश्चात् हम यह भी विचार करें कि इस ब्रह्माण्ड में हो रही प्रत्येक क्रिया अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से हो रही है। समस्त सृष्टि अनायास किसी क्रिया का परिणाम नहीं है, बल्कि प्रत्येक क्रिया अत्यन्त व्यवस्थित व विशेष प्रयोजनानुसार हो रही है। मूलकण, क्वाण्टा आदि सूक्ष्म पदार्थ किंवा विभिन्न विशाल लोक लोकान्तर आदि पदार्थ जड़ होने से न तो बुद्धिमत्तापूर्ण क्रियाएं कर सकते हैं और न वे अपनी क्रियाओं का प्रयोजन ही समझ सकते हैं।

Stephen Hawking, जिन्होंने अपनी पुस्तक 'The Grand Design' में ईश्वर की सत्ता को अपने अवैज्ञानिक कुतर्कों के द्वारा नकारने का असफल प्रयास किया है, वहीं शरीर में जीवात्मा की सत्ता को भी अस्वीकार करने का असफल प्रयत्न किया है| वे उसमें रोबोट एवं परग्रही जीव में भेद भी करते हैं, पुनरपि परग्रही जीव में स्वतन्त्र इच्छा व बुद्धियुक्त आत्मा को नहीं मानते। यही हठ वर्तमान विज्ञान को विनाशकारी भोगवादी मार्ग पर ले जा रही है। वे लिखते हैं

> "How can one tell if a being has free will ? If One encounters an alien,how can one tell if it is just a robot or it has a Mind of its own? The behavior of a robot

would be would be completely determined, unlike that of a being with free will. Thus one could in principle detect a robot as a being whose actions can be predicted. As we said in Chapter 2, this may be impossibly difficult if the beings large and complex. We cannot even solve exactly the equations for three or more particles interacting with each other. Since an alien the size of a human would contain about a thousand trillion trillion particles even if the alien were a robot, it would be impossible to sole the equations and predict what it would do. We would therefore have to say that any complex being has free will-not as a fundamental feature, but as an effective theory, admission of our inability to do the calculations that would enable us to predict its actions."

(The Grand Design- P. 178)

यहाँ पाठक विचारें कि यदि Thousand trillion trillion particles **ही बुद्धि, इच्छा की उत्पत्ति का कारण हो सकते हैं, तब क्या रोबोट में इतने कण नहीं होते? वह भी उन्हीं मूलकणों से बना है, जिनसे हमारा शरीर बना है। अणुओं के स्तर पर ही भेद है, अन्यथा लगभग परमाणुओं के स्तर पर कोई भेद नहीं है, मूलकण स्तर पर तो नितान्त समानता है। तब कैसे कणों की संख्या मात्र के कारण भेद को मान लेते हैं और जीव के व्यवहार को केवल इसी आधार पर अज्ञेय बता देते हैं। आज एक मनुष्य अनेकों स्वचालित रोबोट्स का निर्माण कर सकता है परन्तु क्या अनेकों रोबोट्स मिलकर भी बिना मनुष्य की प्रेरणा व नियन्त्रण के एक मनुष्य तो क्या, स्वयं एक रोबोट का निर्माण भी कर सकते हैं? इस अवैज्ञानिकता व दम्भपूर्ण पुस्तक में जन्म, मरण, इच्छा आदि को जिस प्रकार समझाया है, वह वास्तव में हॉकिंग साहब को वैज्ञानिक के स्थान पर मात्र एक प्रतिक्रियावादी दुराग्रही नास्तिक दार्शनिक के रूप में प्रस्तुत करता है। इसे पढ़कर मेरे मन में इनके प्रति जो सम्मान था, वह लगभग समाप्त हो गया है। उनके प्रत्येक तर्क का उत्तर सरलता से दिया**

जा सकता है परन्तु इस ग्रन्थ में जीव की सत्ता की सिद्धि आवश्यक नहीं है, पुनरपि यहाँ हम संक्षेप में कुछ विचार कर रहे हैं।

रोबोट में इच्छा, ज्ञान, प्रयत्न, द्वेष, सुख व दुःख ये कोई गुण नहीं होते। वह किसी मनुष्य द्वारा निर्मित व संचालित होता है। उधर कोई भी जीवित प्राणी किसी अन्य द्वारा संचालित नहीं होता है, बल्कि प्रत्येक कर्म को करने में स्वतन्त्र होता है। आज हॉकिंग साहब जैसे जो कोई वैज्ञानिक इच्छा, ज्ञान आदि गुणों से युक्त व्यवहार की कथित व्याख्या करके जीवत्मा की सत्ता को नकारने का प्रयास करते हैं, वह वस्तुतः इस प्रकार ही है, जैसे कोई व्यक्ति किसी हलवाई द्वारा बनाये जा रहे व्यजनों की व्याख्या में आग, पानी, आटा ,शक्कर, दूध, घी, कड़ाही, चम्मच आदि सबके कार्यों को बता रहा हो ,इन खाद्य पदार्थों में नाना परिवर्तनों की रासायनिक प्रक्रिया बता रहा हो परन्तु हलवाई की चर्चा ही न कर रहा हो, बल्कि उसके अस्तित्व को ही नकार रहा हो। ऐसी कथित वैज्ञानिक व्याख्याएं वास्तव में अवैज्ञानिक व दुराग्रहपूर्ण ही होती हैं।

ये वैज्ञानिक इसी प्रकार इस सृष्टि की वैज्ञानिक व्याख्या करते समय उसके निर्माता, नियन्त्रक वा संचालक असीम बुद्धि व बल से संपन्न चेतन परमात्मतत्व की उपेक्षा ही नहीं करते, बल्कि उसके अस्तित्व को ही नकारने में एड़ी से चोटी तक का जोर लगाते हैं। हम निःसन्देह वैज्ञानिकों की इस वैज्ञानिक व्याख्याओं की सराहना करते हैं। निश्चित ही वे मूल भौतिकी के क्षेत्र में सतत गम्भीर अनुसन्धान कर रहे हैं और करना भी चाहिये परन्तु इस सम्पूर्ण उपक्रम में चेतन नियन्त्रक, नियामक तत्व को सर्वथा उपेक्षित कर देते हैं। यही कारण है कि विज्ञान वर्तमान मूल भौतिकी की अनेक समस्याओं को आज तक सुलझा नहीं पाया है। इसी कारण विज्ञान की History of the

time में भारी त्रुटियां हैं, ऊर्जा - द्रव्य संरक्षण के भंग होने की समस्या है, 'क्यों' व 'क्या' जैसे प्रश्नों का उत्तर न मिल पाना समस्या है, वस्तुतः सर्वत्र समस्याएं ही समस्याएं हैं।

इस सबके लिखने का अभिप्राय यही है कि सम्पूर्ण जड़ जगत् में जो भी बल व गति विद्यमान है, उस सबके पीछे चेतन ईश्वर तत्व की ही मूल भूमिका है, उधर प्राणियों के शरीर में आत्मा की भूमिका रहती है। प्रत्येक गति के पीछे किसी न किसी बल की भूमिका होती है। केवल बल की भूमिका से गति यदृच्छया, निष्प्रयोजन एवं अव्यवस्थित होगी परन्तु सृष्टि एक व्यवस्थित, बुद्धिगम्य व सप्रयोजन रचना है, इस कारण इसमें बल के साथ महती प्रज्ञा की भी भूमिका अवश्य है। बल व बुद्धि किंवा इच्छा, ज्ञान आदि का होना केवल चेतन में ही सम्भव है। यही चेतन तत्व ईश्वर कहलाता है। इस तत्व पर विचार करना वर्तमान विज्ञान के सामर्थ्य की बात नहीं है, इस कारण वर्तमान वैज्ञानिकों को भौतिक विज्ञान के साथ-२ दर्शन शास्त्र, जहाँ ईश्वर, जीव रूपी सूक्ष्मतम चेतन एवं प्रकृति, मन, प्राण आदि सूक्ष्मतर जड़ पदार्थों का विचार किया जाता है, पर भी गम्भीर चिन्तन करना चाहिए, इससे वर्तमान भौतिक विज्ञान की अनेक समस्याओं का समाधान करने में सहयोग मिलेगा।

पंचावयव से ईश्वर की सिद्धि

महर्षि गौतम ने किसी सिद्धान्त (Theory) के निरूपण के उपायों के पांच अवयव बतलाये हैं-

"प्रतिज्ञाहेतूदाहरणोपनयनिगमनान्यवयवा:'' (न्या.द.१.१.३२)

अर्थात् ये पांच अवयव इस प्रकार हैं-

(1) प्रतिज्ञा= गति अनित्य है।

(2) हेतु= क्योंकि हम इसे उत्पन्न व नष्ट होते देखते हैं।

(3) उदाहरण= जैसे लोक में जड़ पदार्थों वा चेतन प्राणियों द्वारा नाना प्रकार की गतियों का उत्पन्न होना देखा जाता है, साथ ही उन गतियों का विराम भी चेतन द्वारा होना देखा जाता है ।

(4) उपनय= उसी प्रकार अन्य गतियां भी अनित्य हैं।

(5) निगमन= सभी दृष्ट वा अदृष्ट गतियां अनित्य हैं।

गति की अनित्यता की सिद्धि के साथ इसी प्रकार गति के पीछे चेतन कर्ता के अस्तित्व की सिद्धि करते हैं-

(1) प्रतिज्ञा = गति मूलतः चेतन के बल द्वारा उत्पन्न व नियन्त्रित होती है ।

(2) हेतु= हम जगत् में विभिन्न गतियों को विभिन्न चेतन प्राणियों द्वारा उत्पन्न व नियन्त्रित होना देखते हैं।

(3) उदाहरण= जैसे हम स्वयं नाना गतियों को उत्पन्न व नियन्त्रित करते हैं।

(4) उपनय= उसी प्रकार अन्य गतियां, जिनका कोई प्रेरक व नियंत्रक साक्षात् दिखाई नहीं देता, वे भी किसी अदृष्ट चेतन तत्व (ईश्वर आदि) द्वारा नियन्त्रित व प्रेरित होती हैं।

(5) निगमन= सभी प्रकार की गतियों को उत्पन्न, प्रेरित व नियन्त्रित करने वाला कोई न कोई चेतन तत्व (ईश्वर अथवा जीव) अवश्य होता है अर्थात् बिना चेतन के गति उत्पन्न, नियन्त्रित व संचालित नहीं हो सकती।

इसी प्रकार बल के विषय में विचार करते हैं

(1) प्रतिज्ञा= प्रत्येक बल के पीछे चेतन तत्व की भूमिका है।

(2) हेतु= क्योंकि हम चेतन प्राणियों में बल का होना देखते हैं।

(3) उदाहरण= जैसे लोक में हम नाना क्रियाओं में अपने बल का उपयोग करते हैं।

(4) उपनय= उसी प्रकार सृष्टि में जो विभिन्न प्रकार के बल देखे जाते हैं, उन सबमें किसी अदृष्ट चेतन की भूमिका होती है।

(5) निगमन= प्रत्येक बल के पीछे किसी न किसी चेतन (ईश्वर अथवा जीव) की मूल भूमिका अवश्य होती है किंवा वह बल उस चेतन का ही होता है। जड़ पदार्थ में अपना कोई बल नहीं होता है।

अब बुद्धिगम्य कार्यों में चेतन तत्व की भूमिका पर विचार करते हैं-

(1) प्रतिज्ञा= प्रत्येक बुद्धिगम्य, व्यवस्थित रचना के पीछे चेतन तत्व की भूमिका होती है।

(2) हेतु= क्योंकि हम चेतन प्राणियों द्वारा बुद्धिगम्य कार्य करते देखते हैं।

(3) उदाहरण= जैसे हम अपनी बुद्धि के द्वारा नाना प्रकार के कार्यों को सिद्ध करते हैं।

(4) उपनय= उसी प्रकार सृष्टि में विभिन्न बुद्धिगम्य रचनाओं के पीछे ईश्वर रूपी अदृष्ट चेतन की भूमिका होती है।

(5) निगमन= सभी प्रकार की बुद्धिगम्य रचनाओं किंवा सम्पूर्ण सृष्टि की प्रत्येक क्रिया के पीछे चेतन तत्व की अनिवार्य भूमिका होती है।

इस प्रकार संयोगजन्य पदार्थों के अनादि व अनन्त न हो सकने के साथ-२ विभिन्न गति, बल व बुद्धिमत्तापूर्ण रचनाओं के पीछे चेतन तत्व की अनिवार्य भूमिका होती है। कुछ कार्यों में जीव रूपी चेतन की भूमिका होती है। इसी कारण महर्षि वेदव्यास ने लिखा ''सा च प्रशासनात्'' (ब्र.सू.१.३.११) अर्थात् इस सम्पूर्ण सृष्टि की नाना क्रियाएं उस ब्रह्म के प्रशासन से ही सम्पन्न होती हैं।

इस प्रकार जो भी पदार्थ सूक्ष्म कारण पदार्थों के संयोग से बनता है, तथा जो किसी अन्य से प्रेरित गति, बल, क्रिया आदि गुणों से युक्त होता है, वह पदार्थ अनादि नहीं हो सकता, जबकि जो पदार्थ ऐसे सूक्ष्मतम रूप में विद्यमान होता है, जिसका कोई अन्य कारण विद्यमान नहीं हो, वह अनादि हो सकता है। इससे प्रकट हुआ कि मूल प्रकृति रूप पदार्थ में जहाँ कोई गति आदि गुण विद्यमान नहीं रहते अनादि होता है। इसी अनादि पदार्थ से सर्वोच्च नियंत्रक, नियामक, सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक व सर्वज्ञ ईश्वर तत्व इस सृष्टि की रचना समय-२ पर करता रहता है। कभी सृष्टि, तो कभी प्रलय

होती रहती है। इस सृष्टि-प्रलय के चक्र का न तो कभी आदि है और न कभी अन्त। न तो कोई सृष्टि अनादि व अनन्त हो सकती है और न प्रलय परन्तु इनका चक्र अवश्य अनादि व अनन्त है।

इस प्रकार हमने Big Bang Theory **एवं** Eternal Universe **इन दोनों ही मान्यताओं को लेकर सृष्टि के रचयिता चेतन ईश्वर तत्व के अरिस्तत्व की अनिवार्यता को सिद्ध किया।** String Theory **एवं** M-Theory **दोनों ही** Big Bang **में ही विश्वास करती, इसी कारण इनको लेकर पृथक् से ईश्वर तत्व की सिद्धि आवश्यक नहीं है। प्रबुद्ध एवं प्रज्ञावान् पाठकों को चाहिये कि वे अपने-२ हठ, दुराग्रह व अहंकार को त्यागकर सच्ची वैज्ञानिकता का परिचय दें।**

सामान्यतः ईश्वर का अनुभव क्यों नहीं होता?

यहाँ आप यह प्रश्न कर सकते हैं कि सृष्टि की विभिन्न क्रियाओं के कर्त्ता के रूप में हमें ईश्वर का अनुभव क्यों नहीं होता? आइये इस प्रश्न पर विस्तार से विचार करते हैं-

यहाँ सर्वप्रथम हम विचारें कि किसी क्रिया के संचालक वा कर्त्ता का अनुभव किन-२ परिस्थितियों में होता है?

(१) कर्त्ता के साकार होने पर किसी को भी उसका प्रत्यक्ष हो सकता है।

(२) क्रिया के प्रारम्भ व समाप्ति के लक्षणों का अनुभव होने पर ही कर्ता का बोध सहज होता है।

(३) कर्ता स्वयं में किसी हलचल विशेष से भी उसके कर्त्तापन का अनुभव होता है।

(४) कर्त्ता के अनुभव के लिए क्रिया की विविध गतिविधियों वा लक्षणों को पहचानने का ज्ञान अनिवार्य है।

(५) कर्ता के निराकार होने पर सिद्धान्त निरूपण के उपाय के पांचों अवयवों का सम्यग् ज्ञान अनिवार्य है।

अब उपर्युक्त बिन्दुओं पर क्रमशः विचार करते हैं-

(१) कर्त्ता के साकार होने पर उसका प्रत्यक्ष होना सरल है । हम लोक में विभिन्न क्रियाओं के संचालक, नियन्त्रक एवं विभिन्न वस्तुओं के निर्माताओं को प्रत्यक्ष देख सकते हैं। इसमें कोई सन्देह

नहीं है। सृष्टि का कर्त्ता ईश्वर तत्व साकार नहीं होने से नेत्रों से प्रत्यक्ष नहीं होता। इसी प्रकार वह स्वाद, गन्ध, स्पर्श व शब्द का विषय नहीं होने से रसना, घ्राण, त्वचा व श्रोत्र से भी प्रत्यक्ष नहीं होता।

(२) लोक में होने वाली अनेक क्रियाओं को प्रारम्भ व समाप्त होते हम प्रत्यक्ष देखते हैं, इस कारण उन क्रियाओं के प्रारम्भ व समापन के कर्त्ता का बोध सहजता से हो जाता है। सृष्टि की वे क्रियाएं, जिनको प्रारम्भ होते अथवा समाप्त होते, हम देख नहीं सकते अर्थात् जिन क्रियाओं को हम अपने जन्म से लेकर मरण तक यथावत् देखते व सुनते हैं, उन क्रियाओं के प्रारम्भ व समाप्त होने का हमें विचार ही नहीं आता। आकाश में विभिन्न लोकों का भ्रमण, प्रकाशन, अणु वा परमाणुओं की गतियां आदि हमने जन्म से ही जैसी देखी व सुनी हैं, वैसी ही अब तक चल रही हैं और हमारे जीवन काल में वैसी ही बनी रहेंगी। इस कारण इनके कर्त्ता, नियन्त्रक, संचालक आदि गुणों से युक्त किसी चेतन कर्त्ता की साधारणतः कल्पना ही नहीं होती। यदि कोई अत्यल्पायु जीव किसी वाहन को केवल चलता हुआ ही देखे, उसको कभी विराम अवस्था में नहीं देखे, तब उसके मन में यह विषय ही नहीं आयेगा कि इसे किसी कर्त्ता ने चलाया वा चला रहा भी है ।

(३) जब कोई साकार कर्त्ता भी यदि किसी वाहन आदि यन्त्र के पास बैठा रहे परन्तु अपने शरीर में कोई हलचल भी न करे, तब भी किसी प्रत्यक्षदर्शी को ऐसा बोध नहीं हो सकता कि वह कर्त्ता (चालक) उस वाहन को चला रहा है, बल्कि उसे ऐसा प्रतीत होगा कि वाहन स्वतः ही चल रहा है।

(४) जब तक किसी को क्रिया के आदि, अन्त व मध्य में प्रतीत होने वाले नाना लक्षणों का ज्ञान न हो सके, तब तक उसे कर्त्ता बोध नहीं हो सकता। किसी पशु को इस बात का बोध नहीं हो सकता कि कोई व्यक्ति बस, रेल, हवाई जहाज आदि को चलाता है। वह इन वाहनों को चलते व रुकते भी

देख सकता है, उसमें बैठे चालक को भी देख सकता, पुनरपि उसे यह बोध नहीं हो सकता कि वह चालक ही इन वाहनों को चला रहा वा रोक रहा है।

(५) उपर्युक्त चारों बिन्दु साकार कर्मों से ही सम्बन्धित हैं। यदि कर्त्ता निराकार हो, तब उस स्थिति में सिद्धान्त निरूपण के सभी पांचों अवयवों को समझने हेतु प्रतिभा का होना भी अनिवार्य है, अन्यथा ईश्वर तत्व के अस्तित्व का बोध नहीं हो पायेगा। वर्तमान विज्ञान केवल प्रयोग, प्रेक्षण व परीक्षणों में ही विश्वास करता है, गणितीय व्याख्याओं में विश्वास करता है, इस कारण उसे ईश्वर के अस्तित्व का बोध नहीं होता। जहाँ उसकी सीमा समाप्त हो जाती है, वहाँ वह कह देता है कि यह हम नहीं जानते। यह बात तो सत्य है कि आप नहीं जानते परन्तु क्या आपको जानने का यत्न भी नहीं करना चाहिये? क्या आपको यहाँ वैदिक विज्ञान वा दर्शन का आश्रय नहीं लेना चाहिये? आप यह क्यों समझते हैं कि जो वर्तमान विज्ञान से सिद्ध होने योग्य है, वही सत्य है, अन्य सब मिथ्या है। इस विषय में Richard P. Feynman ने उचित ही लिखा है

> ''Mathematics is not a science from our point of view, in the sense that it is not a natural science. The test of its validity is not experiment. We must incidentally, make it clear from the beginning that if a thing is not science it is not necessarily bad. For example, love is not a science. So, if something is said not to be a science, it does not mean that there is something wrong with it, it just means that it is not a science."
>
> (Lectures on Physics- P. 27)

अर्थात् जिसे वर्तमान विज्ञान की सीमा में नहीं माना जा सकता, वह मिथ्या है, यह मानना उचित नहीं है। उसे मात्र यह कहना चाहिये कि यह विज्ञान नहीं है।

वस्तुतः फाइनमैन ने Modern Science की परिभाषा के आधार पर ही यह बात कही है, पुनरपि वे विज्ञान से बाहर के विषयों को मिथ्या व अनावश्यक नहीं मानते। हम वर्तमान विज्ञान एवं दर्शन दोनों की ही परिभाषाओं को स्पष्ट कर चुके हैं। अब हम वैदिक दृष्टि से विज्ञान की परिभाषा पर विचार करते हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती लिखते हैं-

''विज्ञान उसको कहते हैं कि जो कर्मउपासना और ज्ञान इन तीनों से यथावत् उपयोग लेना और परमेश्वर से लेकर तृण पर्यन्त पदार्थों के साक्षात् बोध का होना, उनसे यथावत् उपयोग का करना।''

(वेद विषय विचार- ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका)

इसके संस्कृत भाग में ''पृथिवीतृणमारम्य प्रकृतिपर्यन्तानां पदार्थानां ज्ञानेन यथावदुपकाग्रहण...'' कहकर प्रकृतिपर्यन्त अर्थात् स्थूलतम से लेकर सूक्ष्मतम पदार्थों के यथावत् ज्ञान को विज्ञान कहा है। इसमें ईश्वर व जीव का भी यथार्थ ज्ञान सम्मिलित है। यह यथार्थ ज्ञान कैसे प्राप्त करना, इस विषय में कहा है कि ज्ञान, कर्म व उपासना से यथार्थ विज्ञान प्राप्त होता है। इसका तात्पर्य है कि सत्यशास्त्रों क गम्भीर अध्ययन के पश्चात् उसे कर्म अर्थात् प्रयोग, प्रेक्षण व परीक्षणों से पुष्ट करना, जिसे आज का विज्ञान भी करता है। जो विषय प्रयोग वा प्रेक्षणों से सिद्ध वा साक्षात् नहीं हो सकते, उनके लिए उपासना को विशेष साधन रूप बतलाया है। योग साधना से प्राप्त अन्तर्दृष्टि वैदिक ऋषियों की वह विशिष्ट देन है, जिसके बल पर उन ऋषियों ने सृष्टि के साथ-२ जीव व ईश्वर जैसे निराकार चेतन पदार्थों का साक्षात् करके यथार्थ विज्ञान को प्राप्त किया था। यह ज्ञान प्रायः निर्भ्रान्त होता है। इसी अन्तर्दृष्टि के द्वारा प्राप्त यथार्थ विज्ञान को उन महर्षियों ने कल्प सूत्रों, ब्राह्मण ग्रन्थों, मनुस्मृति, षड्दर्शनों, उपनिषदों, रामायण व महाभारत आदि ग्रन्थों में लिपिबद्ध किया। वे परमयोगिजन अपनी उपासना=समाधि के द्वारा बड़े-लोक लोकान्तरों से लेकर सूक्ष्म मूलकणों व क्वाण्टाज् एवं इनसे भी सूक्ष्म प्राणछन्द व मरुद् आदि पदार्थों में अपने मन वा

बुद्धितत्व को प्रविष्ट कराकर उनका अनुभव बिना किसी बाह्य तकनीक के किया करते थे। इससे आगे वे स्वयं अपने आत्म स्वरूप एवं सबसे सूक्ष्म व अनन्त तत्व ईश्वर का साक्षात् अनुभव किया करते थे। इस प्रकार वैदिक विज्ञान का क्षेत्र वर्तमान विज्ञान की अपेक्षा बहुत व्यापक है। हमने ऐतरेय ब्राह्मण के वैज्ञानिक व्याख्यान करते समय महर्षि ऐतरेय महीदास की योगदृष्टि से जाने गये सृष्टि के गूढ़ रहस्यों को स्वयं अनुभव किया है। आश्चर्य होता है कि कैसे महर्षि भगवन्त अपनी अन्तदृष्टि से सृष्टि विज्ञान के सूक्ष्म व गम्भीर रहस्यों को साक्षात किया करते थे। यह अन्तदृष्टि भी बिना ईश्वर कृपा के नहीं मिल पाती। इस सम्पूर्ण ग्रन्थ में ईश्वरीय सत्ता के संकेत देने वाले अनेक प्रसंग आगे आएंगे।

- **सृष्टिकर्ता-** इस सृष्टि के रचयिता, नियन्त्रक व संचालक के रूप में चेतन तत्व ईश्वर की सिद्धि के उपरान्त हम यह विचार करते हैं कि वह वैज्ञानिक दृष्टि से सिद्ध किया हुआ ईश्वर स्वयं कैसा है? इस पर भी वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करते हैं-
- **सत् स्वरूप-** सर्वप्रथम वह ईश्वर नित्य होना चाहिये। यदि वह ईश्वर अनित्य हो गया, तब उसे बनाने वाली कोई उससे भी महती चेतन सत्ता विद्यमान होनी चाहिये, जो किसी अनित्य ईश्वर नामक पदार्थ को उत्पन्न कर सके। यदि ऐसा हो भी, तब वह महती चेतन सत्ता अवश्य अनादि, नित्य होनी चाहिये। यदि ऐसा मानें, तो उस अनादि चेतन सत्ता को ही ईश्वर नाम दिया जाये, न कि अनित्य सत्ता को अनादि माना जाये। इस कारण ईश्वर सत् स्वरूप सिद्ध होता है। ध्यातव्य है कि कोई भी चेतन सत्ता कभी किसी के द्वारा नहीं बनाई जा सकती और न स्वयं ही बनती है, बल्कि वह निश्चित रूप से अनादि ही होती है।

- **चित् स्वरूप-** वह ईश्वर सत् स्वरूप होने के साथ चेतन भी होना चाहिये, क्योंकि चेतन सत्ता ही इच्छा, ज्ञान व प्रयत्न इन तीनों गुणों से युक्त होकर नाना प्रकार की रचनाओं को सम्पादित कर सकती है।
- **आनन्द स्वरूप-** इसके साथ वह सत्ता आनन्द स्वरूप भी होनी चाहिये। इसका कारण यह है कि सम्पूर्ण सृष्टि को रचने में उसे किंचित् भी क्लेश, दुख आदि नहीं होना चाहिये। यदि वह सत्ता दुख व क्लेश से युक्त होने की आशंका से ग्रस्त हो जाये, तब वह सृष्टि रचना जैसे महान् कर्म को नहीं कर सकेगी। इसलिए ईश्वर तत्व की परिभाषा करते हुए महर्षि पतंजलि ने कहा है-

"क्लेशकर्मविपाकाशयैपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः" (यो. द. १.२४)

अर्थात् अविद्यादि क्लेश, पाप-पुण्य आदि कर्म एवं उसके फलों, वासनाओं से पृथक् पुरुष अर्थात् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में शयन करने वाला अर्थात् व्याप्त रहने वाला चेतन तत्व ईश्वर कहाता है। इस कारण वह सदैव आनन्द स्वरूप ही है। इसीलिए महर्षि दयानन्द ने ईश्वर को सच्चिदानन्द कहा है।

- **सर्वव्यापक-** हम जानते हैं कि हमारी सृष्टि में वर्तमान वैज्ञानिक कदाचित् दो अरब गैलेक्सियों को देख या अनुभव कर चुके हैं। हमारी ही गैलेक्सी में लगभग दो अरब तारे हैं। वैज्ञानिक अब तक देखे गये ब्रह्माण्ड की त्रिज्या 10^{26} m मानते हैं। दो गैलेक्सियों के मध्य अरबों-खरबों किलोमीटर क्षेत्र में कोई लोक नहीं होता, पुनरपि सम्पूर्ण रिक्त स्थान में सूक्ष्म हाइड्रोजन गैस अत्यन्त विरल अवस्था में भरी रहती है। उसके मध्य भी Vacuum Energy भरी रहती है। सारांश यह है कि इतने बड़े ब्रह्माण्ड में नितान्त रिक्त स्थान कहीं नहीं है। इसमें हमारे सूर्य से करोड़ों गुने बड़े तारे भी विद्यमान हैं, तो सूक्ष्म लेप्टॉन, क्वार्क एवं क्वाण्टाज् भी

विद्यमान हैं। इनके अतिरिक्त इनसे भी सूक्ष्म प्राण, छन्द व मनतत्वादि पदार्थ विद्यमान हैं। इन सभी स्थूल व सूक्ष्म पदाथों में गति व बल की विद्यमानता है। सबमें सृजन व विनाश का खेल हो रहा है। इस कारण जहाँ -२ यह खेल चल रहा है, वहाँ -२ ईश्वर तत्व भी विद्यमान होना चाहिये। इसका आशय यह है कि ईश्वर सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थों में भी विद्यमान है तथा स्थूल से स्थूलतम पदार्थों में भी विद्यमान है। इसी कारण कठ उपनिषद् के ऋषि ने कहा

"अणोरणीयान् महतो महीयान्" (कठ. उ.२.२०)

अर्थात् वह परमात्मा सूक्ष्म से सूक्ष्म और महान से महान् है। इस कारण वह सर्वव्यापक है।

यजुर्वेद ने कहा है-

"ईशावास्यमिदँ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्" (यजु. ४०.१)

अर्थात् वह ईश्वर इस सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त होकर उसे आच्छादित किये हुए है। इस प्रकार वह ईश्वर सर्वव्यापक सिद्ध होता है। वह एकदेशी कभी नहीं हो सकता।

- **सर्वशक्तिमान्-** इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को बनाने, चलाने व नियन्त्रित करने वाला सर्वव्यापक ईश्वर तत्व सर्वशक्तिमान् ही होना चाहिये। आज का विज्ञान इस बात से अवगत है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कितना विशाल है? सूक्ष्म कणों से लेकर विशाल लोकों की रचना करना, उन्हें गतियां प्रदान करना, सभी बलों व ऊर्जाओं को भी बल व ऊर्जा प्रदान करना, किसी सामान्य शक्ति वाले तत्व का सामर्थ्य नहीं है, इस कारण वह ईश्वर तत्व सर्वशक्तिमान् ही हो सकता है। यहाँ ध्यातव्य है कि 'सर्वशक्तिमान्' का अर्थ यह नहीं है कि ईश्वर बिना किसी उपादान पदार्थ के शून्य से सृष्टि रचना कर सकता है अथवा वह बिना किसी नियम के चमत्कार-पूर्वक कुछ भी कर सकता है, उसके लिए किसी भी कार्य का करना असम्भव नहीं है, ऐसा

कथन उचित नहीं है। ईश्वर स्वयं नियामक है, जो अपने ही नियमों के अनुसार कार्य कर सकता है, अन्यथा कार्य नहीं कर सकता। उसकी सर्वशक्तिमत्ता तो इस बात में है कि वह इतनी बड़ी सृष्टि को बिना किसी की सहायता से बनाता, चलाता व समय आने पर उसका प्रलय भी करता है।

- **निराकार-** अब इस बात पर विचार करें कि जो पदार्थ सर्वशक्तिमान् अर्थात् अनन्त ऊर्जा व बल से युक्त एवं सर्वव्यापक होगा, उसका आकार क्या होगा? हम यह समझते हैं कि इस विषय में सामान्य बुद्धि वाला भी यही कहेगा कि सर्वव्यापक व सर्वशक्तिमती सत्ता का कोई आकार नहीं होगा। वस्तुतः ऊर्जा व बल जैसे गुण किसी साकार पदार्थ में होते ही नहीं है। इस संसार में साकार पदार्थों में जो भी बल या ऊर्जा दिखाई देती है, वह वस्तुतः उस साकार पदार्थ के अन्दर विद्यमान अन्य निराकार पदार्थ की ही होती है। विभिन्न विशाल वा लघु यन्त्रों में विद्युत्, जो निराकार ही होती है, आदि का ही बल विद्यमान होता है। प्राणियों के शरीरों में चेतन जीवात्मा का भी बल कार्य करता है। निराकार विद्युत् आदि पदार्थों में चेतन परम तत्व ईश्वर का बल कार्य करता है, यह बात हम पूर्व में ही लिख चुके है। जो ईश्वर तत्व प्रत्येक सूक्ष्म व स्थूल पदार्थों में व्याप्त होकर उन्हें बल व ऊर्जा प्रदान कर रहा है, वह केवल निराकार ही हो सकता है, साकार कदापि नहीं।
- **सर्वज्ञ-** ईश्वरतत्व की सर्वशक्तिमत्ता के पश्चात् उसकी सर्वज्ञता पर विचार करते हैं। यह सामान्य बद्धि की बात है कि आधुनिक जगत् में एक-२ यन्त्र बनाने वाला इंजीनियर तथा ब्रह्माण्ड के कुछ रहस्यों को जानने वाला एक वैज्ञानिक बहुत बुद्धिमान् माना जाता है। ऐसी स्थिति में जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को रचता और चलाता है, वह कितना ज्ञानी होगा? वस्तुतः वह ईश्वर सर्वज्ञ ही होता है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जिसे जानने का प्रयास, यह धरती का सर्वश्रेष्ठ प्राणी

मानव करोड़ों वर्षों से करता रहा है और जब तक सृष्टि रहेगी, वह ऐसा प्रयास करता भी रहेगा परन्तु उसे कभी पूर्णतः नहीं जान सकेगा। वह ऐसा ब्रह्माण्ड जिसने बनाया है, जो उसे चला रहा है, वह निश्चित ही सर्वज्ञ अर्थात अनन्त ज्ञान वाला ही होगा।

- **पवित्र-** वह ऐसा ईश्वर कभी भी सृष्टि के उपादान कारण रूप पदार्थ में मिश्रित नहीं होता, इसी कारण उसे पवित्र भी कहते हैं अर्थात् वह सदैव विशुद्ध रूप में विद्यमान रहता है, इसी कारण ईश्वर को सृष्टि का निमित्त कारण माना जाता है, जबकि प्रकृति रूपी मूल पदार्थ इस सृष्टि का उपादान कारण माना जाता है। यही यथार्थता है। इसके साथ ही यह भी तथ्य है कि ईश्वर कभी किसी भी प्रकार के दोष से किंचिदपि ग्रस्त नहीं हो सकता।
- **सर्वाधार-** ऐसा वह ईश्वर ही इस ब्रह्माण्ड को बनाता, चलाता हुआ उसे धारण भी कर रहा है, इस कारण वह सर्वाधार कहलाता है। वर्तमान विज्ञान इसके धारण में गुरुत्वाकर्षण बल एवं डार्क मैटर की भूमिका मानता है। यह सत्य भी है परन्तु इन धारक पदार्थों का धारक स्वयं ईश्वर तत्व ही है।
- **न्यायकारी-दयालु-** ऐसा वह ईश्वर तत्व निश्चित ही सर्वदा सर्वथा पूर्ण व तृप्त वा अकाम होना चाहिये। तब वह इस सृष्टि की रचना स्वयं के लिए नहीं बल्कि किसी अन्य अपूर्णकाम चेतन तत्व के उपभोग व मोक्ष हेतु करता है। वह अपूर्णकाम चेतन तत्व ही जीवात्मा कहाता है। यहाँ 'अपूर्ण' अर्थ का यह समझना चाहिये कि वह बल, ज्ञान व आयतन आदि की दृष्टि से ईश्वर की अपेक्षा अत्यन्त लघु है। क्योंकि वह ईश्वर अपने लिए कुछ भी नहीं चाहता, बल्कि जीवों की भलाई के लिए ही सष्टि रचना करता है, इस कारण वह दयालु कहलाता है। वह सदैव जीवों को उनके कर्मों के अनुसार ही फल देता है, न उससे अधिक और न्यून, इसी कारण उसे न्यायकारी भी कहा जाता है। कर्मानुसार फल का मिलना चेतन पदार्थ जगत् में

कारण कार्य के नियम के समान है। जड़ जगत् में हम सर्वत्र कारण कार्य का नियम देखते हैं। वर्तमान विज्ञान भी जड़ जगत् में कारण कार्य के नियम को स्वीकार करते हैं। Arthur Beiser लिखते हैं-

"cause and effects are still related in quantum mechanics, but what they concern needs careful interpretation" (Concepts of Modern Physics- P. 161)

जब जड़ जगत में कारण-कार्य का नियम सर्वत्र कार्य करता है, भले उसे हम पूर्णतः समझ न पाएं, तब वह चेतन जगत् में क्यों नहीं कार्य करेगा? हमारा मत यह है कि यहाँ कर्मफल व्यवस्था ही कारण कार्य के नियम के रूप में कार्य करती है। हम इसे पूर्णतः कभी नहीं जान सकते। ईश्वर भी इस व्यवस्था को उपेक्षित नहीं कर सकता। उसकी प्रार्थना, उपासना आदि करने से भी वह किसी जीव के कमों के अनिष्ट फल से उस जीव को नहीं बचा सकता इसी में उसका न्याय व दया दोनों ही समाहित है। यदि प्रार्थना से प्रभावित होकर वह जीवों को उनके पापों का दण्ड न दे, तो उसकी सम्पूर्ण कर्मन्याय व्यवस्था अस्त व्यस्त हो जाये। किसी अपराधी के अपराध को क्षमा करना न्यायाधीश का न्याय नहीं बल्कि अन्याय ही होता है। इस क्षमा से वह अपराधी पाप करने हेतु और भी प्रोत्साहित होता तथा इससे वह अनेक जीवों को और भी अधिक दुःख दे सकता है, जिसका फल स्वयं न्यायाधीश को भी भोगना पड़ता है किंवा वही उस पापों का उत्तरदायी होता है। इस कारण सच्चा न्यायाधीश कभी किसी अपराधी को क्षमा नहीं करता और न क्षमा करना चाहिये। जब कोई सच्चा न्यायाधीश ऐसा नहीं करता, तब वह परमात्मा रूप न्यायाधीश क्यों किसी के अपराध क्षमा करके अपनी न्याय व्यवस्था मंग करेगा? ईश्वरीय व्यवस्था प्रणत व्यवस्थित व स्वाभाविक है, उसमें कभी कोई स्खलन नहीं होता। इस कारण जो ईश्वरवादी प्रार्थना, याग, तौबा,

confession आदि के द्वारा अपने पापमोचन की कामना करते हैं, वे ईश्वर तत्व के विशुद्ध स्वरूप को नहीं समझते। पाप के फल के विषय में महादेव शिव मगवती उमा से कहते हैं-

'द्विधा तु क्रियते पापं सनिश्वासद्वि च। अभिसंधाय वा नित्यमन्यथा वा यदृच्छया।।

अभिसंधिकृतस्पैव नैव नाशोकस्ति कर्मणः। अश्वमेधसहग्रेश्च प्रायश्चित्तशतैरपि।।

अन्यथा यत् कृतं पाप प्रमादा वा यदृच्छया। प्रायश्चित्ताश्वमेधाभ्यां श्रेयसा तत् प्रणस्यति।'

(महाभारत, अनु - पर्व दानधर्मपर्व। अध्याय १४५ दाक्षिणात्य संस्करण)

इसका भाव यह है कि जो पाप प्रमाद वा असावधानी पूर्वक हो जाये, वह प्रायश्चित्त आदि कुछ उपायों से मिट सकता है परन्तु, जो पाप जानकर वा प्रतिज्ञापूर्वक किया गया हो, वह कभी भी नाश को प्राप्त नहीं होता अर्थात् उसका फल अवश्य ही भोगना पड़ता है। यही ईश्वर का सच्चा न्याय व यही सच्ची दया है। दण्ड देने के पीछे भी ईश्वर का प्रयोजन होता है कि उस पापी प्राणी के पापों से अन्य प्राणियों की रक्षा हो सके और वह पापी प्राणी स्वयं भी भविष्य में पाप में प्रवृत्त न होवे। वह ईश्वर पापी जीव को इसी प्रकार दण्ड देता है, जैसे योग्य माता-पिता अपनी संतान को बुराइयों से बचाने हेतु दयापूर्वक ताड़ना करते हैं, न कि वे क्रोधवश ऐसा करते हैं। इसी प्रकार वही ईश्वर सभी जीवों का सबसे बड़े माता-पिता के समान पालक, न्यायकारी व दयालु है।

आज संसार में एक सत्य सनातन वैदिक धर्म को त्यागकर मनुष्य समाज नाना सम्प्रदायों में विभाजित होकर नाना ईश्वरों की कल्पना कर रहा है। प्रायः सभी सम्प्रदाय पापों से मुक्ति के कई सरल उपाय बताते हैं। सभी प्रायः ईश्वर को पाप क्षमा करने वाला मानते हैं। एतदर्थ ईश्वर को प्रसन्न करने हेतु नाना प्रकार के पूजाडम्बर, नदी स्नान, नाम स्मरणकथा स्मरण, व्रत, उपवास, रोजा, प्रार्थना, नमाज, नाना मूर्तियों, पेड़ पौधों वा पशुओं आदि की पूजा आदि अनेकों साधन

प्रचारित कर रखे हैं। इनसे पाप तो क्षमा नहीं होते किन्तु इन आडम्बरों के प्रचारकों की आजीविका अवश्य चल रही है। ये आडम्बर जितनी मात्रा में बढ़ रहे हैं, पाप भी उतनी ही मात्रा में निरन्तर बढ़ते जा रहे हैं। इससे सामान्य प्रबुद्ध व्यक्ति का विश्वास न केवल ईश्वर व उसकी कर्मफल व्यवस्था से उठता जा रहा है, अपितु नैतिक मूल्यों का भी निरन्तर क्षरण होता जा रहा है। इस कारण ईश्वर के दयालु व न्यायकारी दोनों ही विशेषणों का समन्वित वैज्ञानिक स्वरूप समझना नितान्त आवश्यक है।

इस प्रकार ईश्वर तत्व के अनन्त गुण, कर्म स्वभाव हैं। हमने यहाँ कुछ गुणों की विवेचना की । महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज के दूसरे नियम में ईश्वर तत्व के स्वरूप का अत्यन्त सुन्दर विवेचन करते हुए गागर में सागर भर दिया है। वे लिखते हैं -

''ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।''

ईश्वर के स्वरूप का इससे सुन्दर विवेचन कदाचित् ही कहीं मिले। आज संसार में प्रचलित विभिन्न मत सम्प्रदायों में ईश्वर के मिथ्या कल्पित रूपों की। ऐसे ही ईश्वरों के अस्तित्व का भरमार है Stephen Hawing ने The Grand Design नामक पुस्तक में उपहासपूर्वक खण्डन किया है और करना भी चाहिये। यदि Hawking के समक्ष ईश्वर तत्व का यह वैदिक वैज्ञानिक स्वरूप विद्यमान होता, तो उन्हें ईश्वर तत्व की मान्यता को खण्डित करने की आवश्यकता नहीं होती। यह आश्चर्य ही है कि कोई भी ईश्वरवादी Hawking के विचारों को पढ़कर ईश्वर के सत्य स्वरूप को जानने हेतु प्रवृत्त होता नहीं दिखाई दिया, बल्कि ईश्वर की सत्ता को ही नकारने पर जोर

दिया गया। आशा है । कि आधुनिक वैज्ञानिकों को हमारे ईश्वर विषयक इस प्रकरण से ईश्वरीय सत्ता व स्वरूप का अवश्य बोध होगा और वे Hawking **जैसी भूल नहीं दोहराएंगे।**

ईश्वर के कार्य करने की प्रणाली

ईश्वरीय सत्ता के अस्तित्व व स्वरूप की वैज्ञानिकता की चर्चा के उपरान्त हम इस बात पर विचार करते हैं कि ईश्वर इस सृष्टि की रचना, संचालन, धारण व प्रलय आदि प्रक्रियाओं में अपनी क्या व कैसी भूमिका निभाता है अर्थात् उसकी कार्यप्रणाली- क्रियाविज्ञान क्या है? संसार भर के ईश्वरवादी नाना प्रकार से ईश्वर की चर्चा तो करते हैं परन्तु इस बात पर विचार भी नहीं करते कि वह ईश्वर अपने कार्यों को सम्पन्न कैसे करता है? हम यह जानते हैं कि इस सृष्टि में जो भी क्रियाएं हो रही हैं, उनके पीछे चेतन तत्व ईश्वर की भूमिका है। वहीं प्राणियों के शरीरों में जीवात्मा रूपी चेतन तत्व की भी भूमिका होती है। हम यहाँ ईश्वर तत्व की भूमिका की चर्चा करते हैं। क्या ईश्वर छोटे-२ कण, क्वाण्टा आदि से लेकर बड़े-२ लोक लोकान्तों के घूर्णन व परिक्रमण, उनके धारण, आकर्षण, प्रतिकर्षण बलों का प्रत्यक्ष कारण है? नहीं, ईश्वर सूर्यादि लोकों व इलेक्ट्रॉन्स आदि कणों को पकड़कर नहीं घुमाता वा चलाता है, बल्कि ये सभी पदार्थ उन्हीं विभिन्न बलों, जिन्हें वर्तमान विज्ञान जानता वा जानने का यत्न कर रहा है, के द्वारा अपने-२ कार्य कर रहे हैं। हाँ, इन बलों की उत्पत्ति जिन प्राण व छन्दादि पदार्थों से हुई है, उन्हें वर्तमान विज्ञान किंचिदपि नहीं जानता। इसी कारण वर्तमान विज्ञान द्वारा माने जाने वाले मूलबलों की उत्पत्ति एवं क्रियाविधि की समुचित व्याख्या करने में यह विज्ञान अक्षम है। इन मूल बलों की उत्पत्ति एवं नियन्त्रण इन्हीं विविध प्रकार की प्राण व छन्दादि रश्मियों के द्वारा होती है। बात यहीं समाप्त नहीं हो जाती, ये प्राण व छन्दादि रश्मियां भी मन एवं सूक्ष्म वाक् तत्व के मिथुन से उत्पन्न व नियन्त्रित होती हैं। इस कारण मन एवं सूक्ष्म वाक्

तत्व के स्वरूप व व्यवहार को समझे बिना प्राण व छन्दादि रश्मियों एवं उनसे उत्पन्न विभिन्न कथित मूल बलों (गुरुत्व, विद्युत चुम्बकीय, नाभिकीय बल एवं दुर्बल बल) के स्वरूप व क्रियाविज्ञान का यथावत् बोध नहीं हो सकेगा।

ध्यातव्य है कि मन व वाक् तत्व भी जड़ होने के कारण स्वतः किसी कार्य में प्रवृत्त होने का सामर्थ्य नहीं रखते। इन्हें प्रवृत्त करने वाला सबका मूल तत्व चेतन ईश्वर है। वही इन मन एवं सूक्ष्म वाक् तत्व को प्रेरित करता है। इनके मध्य एक काल तत्व भी होता है परन्तु वह भी जड़ होने से ईश्वर तत्व से प्रेरित होकर कार्य करता है। इस प्रकार कार्य करने किंवा प्रेरक एवं प्रेरित पदार्थ, नियामक व नियम्य तत्वों की श्रृंखला इस प्रकार है-

चेतन ईश्वर तत्व काल को प्रेरित करता है। काल तत्व मन- वाक् को प्रेरित करता, पुनः मन एवं वाक् तत्व प्राण व छन्दादि रश्मियों को प्रेरित करते हैं। तदुपरान्त वे प्राण व छन्दादि रश्मियां आधुनिक कथित चार प्रकार के मूल बलों को उत्पन्न व प्रेरित करती हैं, उसके पश्चात् वे चारों बल (वस्तुतः बलों की संख्या बहुत अधिक है, जो सभी प्राणादि रश्मियों के कारण ही उत्पन्न होते हैं) समस्त सृष्टि को उत्पन्न व संचालित करने में सहायक होते हैं।

इस प्रकार ईश्वर तत्व प्रत्येक क्रिया के समय केवल काल वा ओम् छन्द रश्मियों को ही प्रेरित करता है, वे अग्रिम प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हैं। ये इतने सूक्ष्म तत्व हैं कि मनुष्य कभी भी इन्हें किसी प्रयोग प्रेक्षण के द्वारा नहीं जान सकता। केवल उच्च कोटि का योगी ही इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को जान व समझ सकता है। इस ग्रन्थ में महायोगी महर्षि ऐतरेय महीदास ने इसी सम्पूर्ण प्रक्रिया को अपने महान् योग बल के द्वारा समझ कर इस महान् रहस्यपूर्ण ग्रन्थ में वर्णित किया है। परमेश्वर की असीम दया से हमने इस ग्रन्थ को समझने में सफलता पाई है। इसमें स्थान-२ पर

ईश्वर तत्व की भूमिका का वर्णन किंवा उसके क्रियाविज्ञान का सांकेतिक वर्णन है, जिसे पाठक ग्रन्थ का अध्ययन करके ही जान सकेंगे। सारांशतः ईश्वर काल, ओम् रश्मि व प्रकृति को प्रेरित करके सृष्टि प्रक्रिया को प्रारम्भ व सम्पादित करता है। वह किसी क्रिया में जीवात्मा की भांति ऐसा भागीदार नहीं होता कि उसे अपने कर्मों का फल भोगना पड़े। वह सर्वथा अकाम है। केवल जीवों के लिए सब कुछ करता है, इस कारण वह कर्ता भी है और अकर्ता भी। वह सृष्टि का निमित्त कारण है। ईश्वर कैसे प्रेरित करता है? उस प्रेरणा वा जागरण का क्रियाविज्ञान क्या है? यह बात हमने आगे कालतत्व प्रकरण में संक्षिप्त रूप से समझायेंगे है, पाठक वहीं देख सकते हैं।[1]

[1] इस विषय को आप वेद विज्ञान आलोकः ग्रन्थ में पढ़ सकते हैं वा Vaidic Physics youtube channel पर वीडियो भी उपलब्ध है उसे देख सकते हैं।

अद्वैतवाद समीक्षा

इस संसार में जहाँ चार्वाक, बौद्ध व जैन मत आदि ईश्वर की सत्ता में विश्वास नहीं करते हैं, वहीं कुछ अध्यात्मवादी मानते हैं कि इस सम्पूर्ण सृष्टि में मात्र ईश्वर तत्व की सत्ता है, जीव व प्रकृति आदि की कोई सत्ता नहीं है। यह विचार मध्यकाल में अनेक आचार्यों का रहा है। इन आचार्यों में से आद्य शंकराचार्य को प्रमुख स्थान दिया जाता है। अद्वैतवाद का आधार महर्षि कृष्ण द्वैपायन बादरायण व्यास (महर्षि वेदव्यास) का ब्रह्मसूत्र नामक महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना जाता है। यह मत संसार के अनेक वैदिक व अवैदिक किंवा भारतीय व विदेशी मत मतान्तरों को प्रभावित करता रहा व कर रहा है। हम इसकी चर्चा न करके मात्र इसी विषय पर विचार करेंगे कि यह मत क्यों वेद विरुद्धस्वयं ब्रह्मसूत्रों क के विरुद्ध तथा विज्ञान व युक्तियों के विरुद्ध है? ब्रह्मसूत्रों में प्रथम दो सूत्रों से ही अद्वैतवाद खण्डित हो जाता है। वे दो सूत्र इस प्रकार हैं

''अथातो ब्रह्मजिज्ञासा'' (ब्र.सू. १.१.१)

''जन्माषस्य यतः'' (ब्र .सू.१.१.२)

इन दो सूत्रों से ब्रह्म विषयक चर्चा प्रारम्भ करते हुए कहा है-

"अब हम ब्रह्मा को जानने की इच्छा करते हैं। वह ब्रह्म कैसा व कौन है? यह बताते हुए कहते हैं कि जिससे जगत् का जन्मादि (जन्म, स्थिति व प्रलयादि) होता है ।"

जरा विचारें कि जिस जगत् का जन्म होता है, उसमें स्थिति होती है तथा समय आने पर ब्रह्म उसका प्रलय भी करता है, वह जगत् कभी मिथ्या नहीं हो सकता। न जाने क्यों, इस ब्रह्म प्रतिपादक महान् ग्रन्थ के आधार पर ब्रह्म के अतिरिक्त अन्य सभी पदार्थों की सत्ता को नकारा जाता है? जबकि यह ग्रन्थ अपने प्रारम्भ में ही जगत् के सभी पदार्थों की वास्तविकता को प्रतिपादित कर रहा है। यह बात पृथक है कि जगत् ब्रह्म की भाँति नित्य नहीं है परन्तु जगत् मिथ्या (अवास्तविक) भी नहीं है। यहाँ जीव व प्रकृति रूपी मूल उपादान कारण के अस्तित्व का भी निषेध नहीं है। ब्रह्मसूत्र ग्रन्थ के विषय में यह बहुत बड़ी भ्रान्ति हो गयी है, हो रही है। हमने 'वर्ल्ड कांग्रेस ऑन वैदिक सायंसेज' बैंगलोर में अगस्त २००४ में अनेक वैदिक विद्वानों तथा वर्तमान भौतिक शास्त्रियों को ब्रह्मसूत्र की मिथ्या व्याख्या करते देखा है। अद्वैतवाद की शास्त्रीय समीक्षा हेतु पाठकों को महर्षि दयानन्द सरस्वती रचित 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक क्रान्तिकारी ग्रन्थ अवश्य पढ़ना चाहिये। हम यहाँ उसका पिष्टपेषण करना आवश्यक नहीं समझते, बल्कि हम यहाँ वर्तमान विज्ञान का आश्रय लेकर अद्वैतवाद की पुष्टि के प्रयास की समीक्षा अवश्य करेंगे। इस पक्ष के विद्वान सर्वप्रथम आधुनिक विज्ञान के पदार्थ द्रव्य व ऊर्जा के पारस्परिक रूपान्तरण की चर्चा करते हुए अन्त में इन दोनों को चेतन ऊर्जा में परिवर्तनीय व उससे उत्पन्न सिद्ध करते हैं। सामान्यतः यह विचार वैज्ञानिक सत्य ही प्रतीत होता है परन्तु इस पर विशेष चिंतन करने पर इसकी असारता स्पष्ट हो जाती है। सर्वप्रथम इस बात का विचार करें कि परिवर्तनीय तत्व कौन-२ हो सकते हैं? स्पष्टतः जो पदार्थ विकारी होते हैं, वे ही विकार को प्राप्त होकर रूपांतरित होने में सक्षम होते हैं। अब प्रश्न उठता है कि विकारी पदार्थ क्या व कैसा होता है? हमारी दृष्टि में विकारी पदार्थ जड़ ही हो सकता है। यदि एक-२ सूक्ष्म कण वा क्वाण्टा को जड़ के स्थान पर चेतन मानें, तब प्रश्न यह उठेगा कि क्या प्रत्येक कण वा क्वाण्टा की चेतना पृथक्-२ है वा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की चेतना एक ही है? यदि प्रत्येक कण की

चेतना पृथक्-२ है, तब ब्रह्माण्ड भर के सम्पूर्ण पदार्थ को कैसे एक प्रकार के नियमों में बंधा देखा जाता है? जिस प्रकार प्रत्येक प्राणी की ऐच्छिक क्रियाएं, विचार, संस्कार पृथक्-२ होते हैं, उसी प्रकार प्रत्येक कण व क्वाण्टा को यदि चेतन मानें, तो उनकी क्रियाएं परस्पर समान ही हों, यह आवश्यक नहीं है। वे परस्पर संगत रहें वा नहीं, यह भी आवश्यक नहीं है। प्रत्येक कण की पृथक्-२ चेतन सत्ता होने पर भी वे परस्पर मिलकर इस सृष्टि की रचना हेतु परस्पर अपने नाना समूह बना सकें और सम्पूर्ण सृष्टि के असंख्य नियमों को बना सकें, यह सर्वथा असम्भव है? ऐसा कार्य कोई प्राणी नहीं कर सकता। सर्वाधिक बुद्धिमान माना जाने वाला प्राणी मनुष्य अपने समाज का निर्माण करता है परन्तु उन समाजों की संरचना ऐसी जटिल नहीं होती, जैसी कि विभिन्न जड़ पदार्थों में उन पदार्थों के अवयवभूत सूक्ष्मकण वा क्वाण्टाज निर्मित करते हैं। विभिन्न प्राणी अपनी सामाजिक संरचनाओं को समय-२ पर अपनी-२ रुचि व स्वभाव-संस्कार के अनुसार बदलते रहते हैं परन्तु विभिन्न कणों वा क्वाण्टाज के नियम कभी परिवर्तित नहीं होते।

नोटः हमारी दृष्टि में आद्य शंकराचार्य महाराज अद्वैतवादी नहीं थे। उन्हें समझने में उनके अनुयायियों ने कुछ भूल की है।

(vaidic-physics.blogspot.com से साभार उद्धृत)

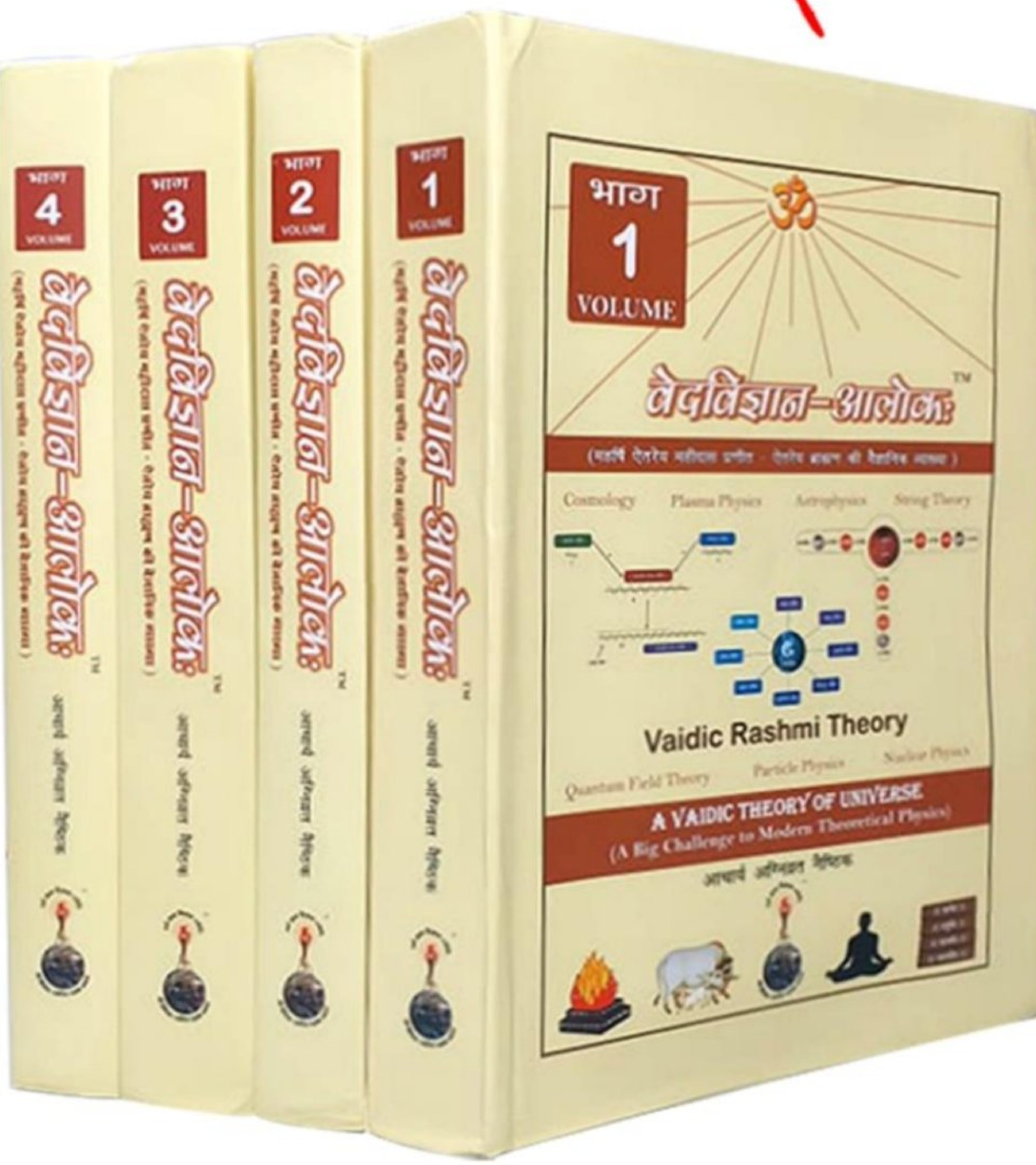
ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।

वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

“ ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

महर्षि दयानंद सरस्वती



वेद विज्ञान आलोकः

ऐतरेय ब्राह्मण का वैज्ञानिक भाष्य

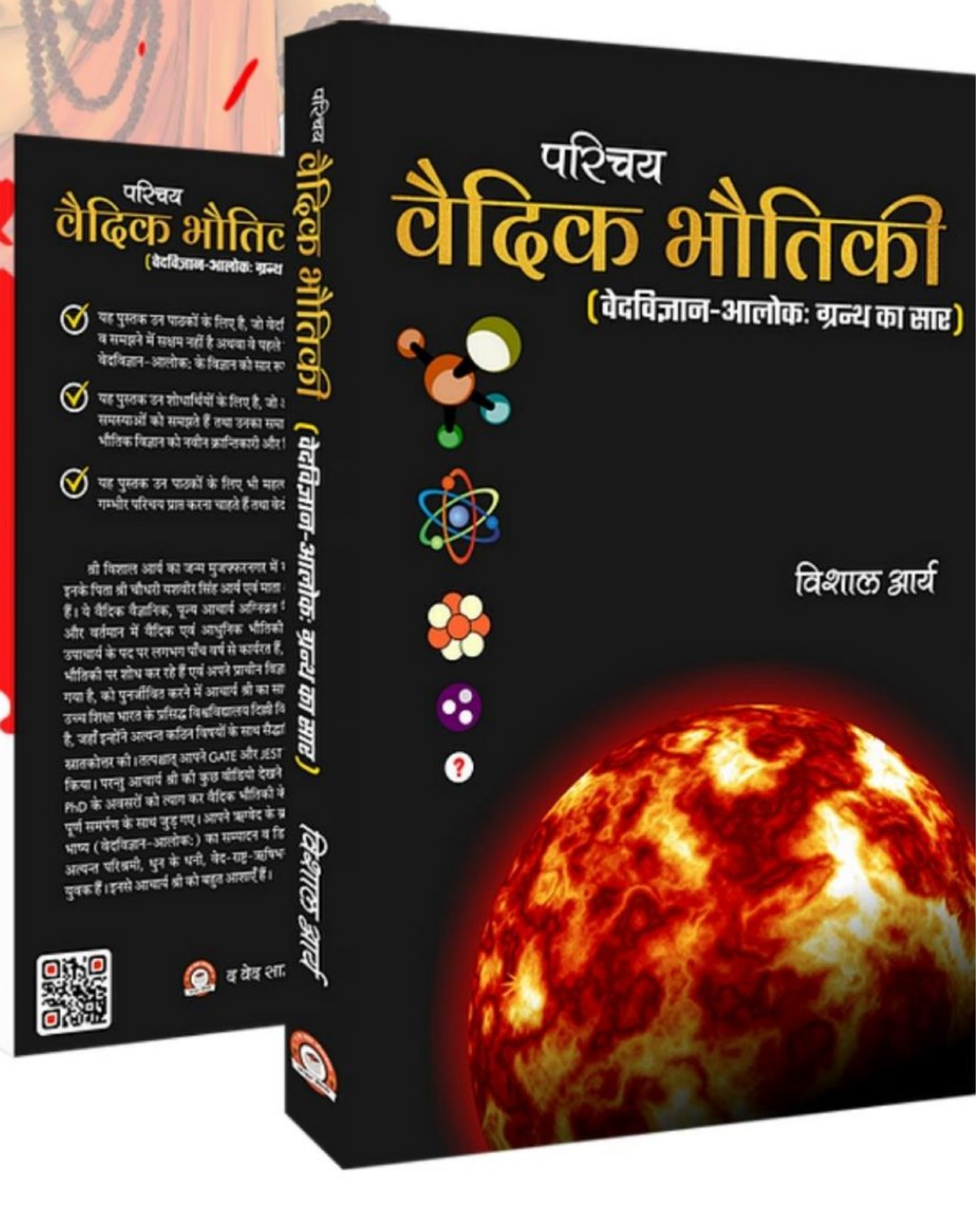
लेखक – आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक जी

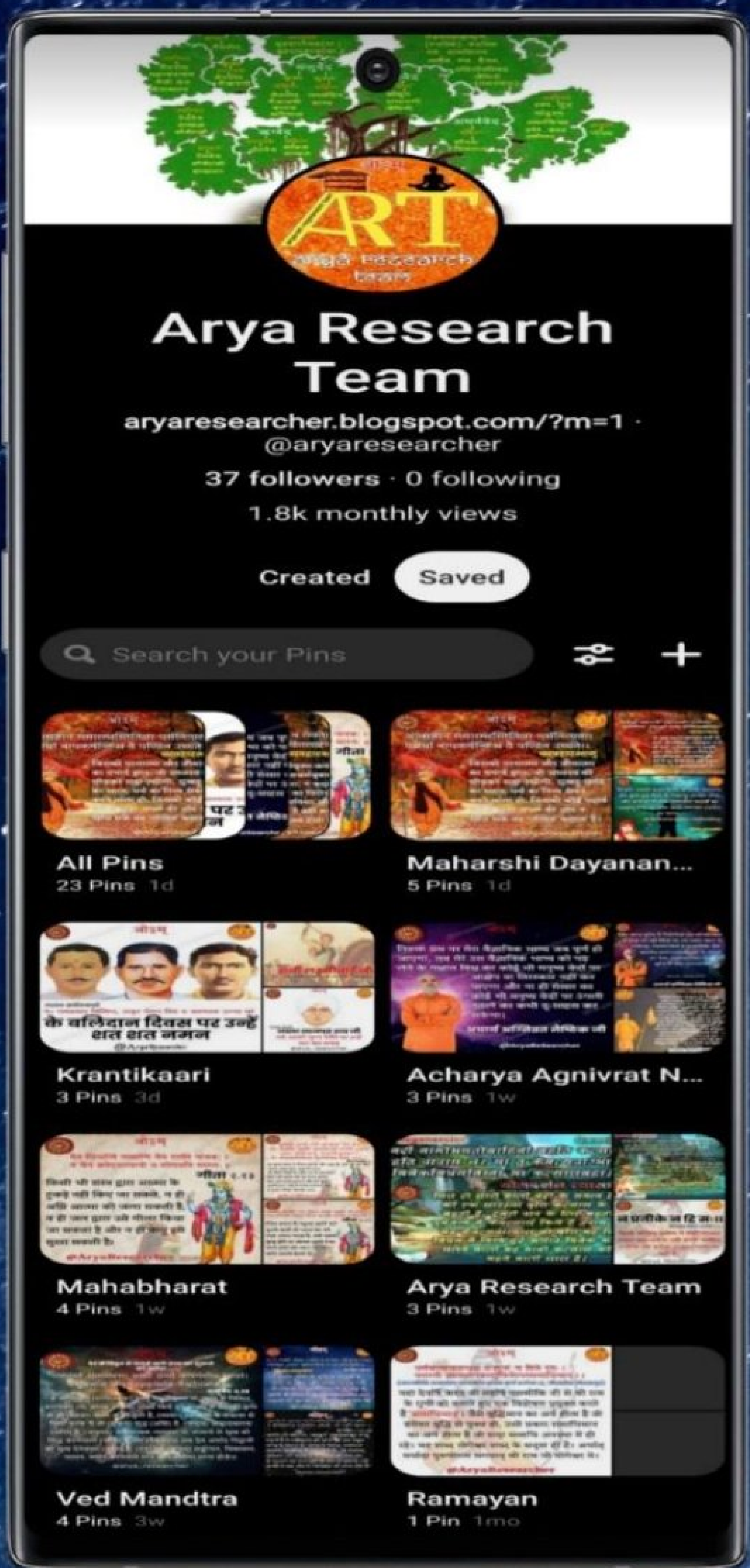


परिचय वैदिक भौतिकी

वेद विज्ञान आलोकः ग्रंथ का सार

लेखक – विशाल आर्य जी





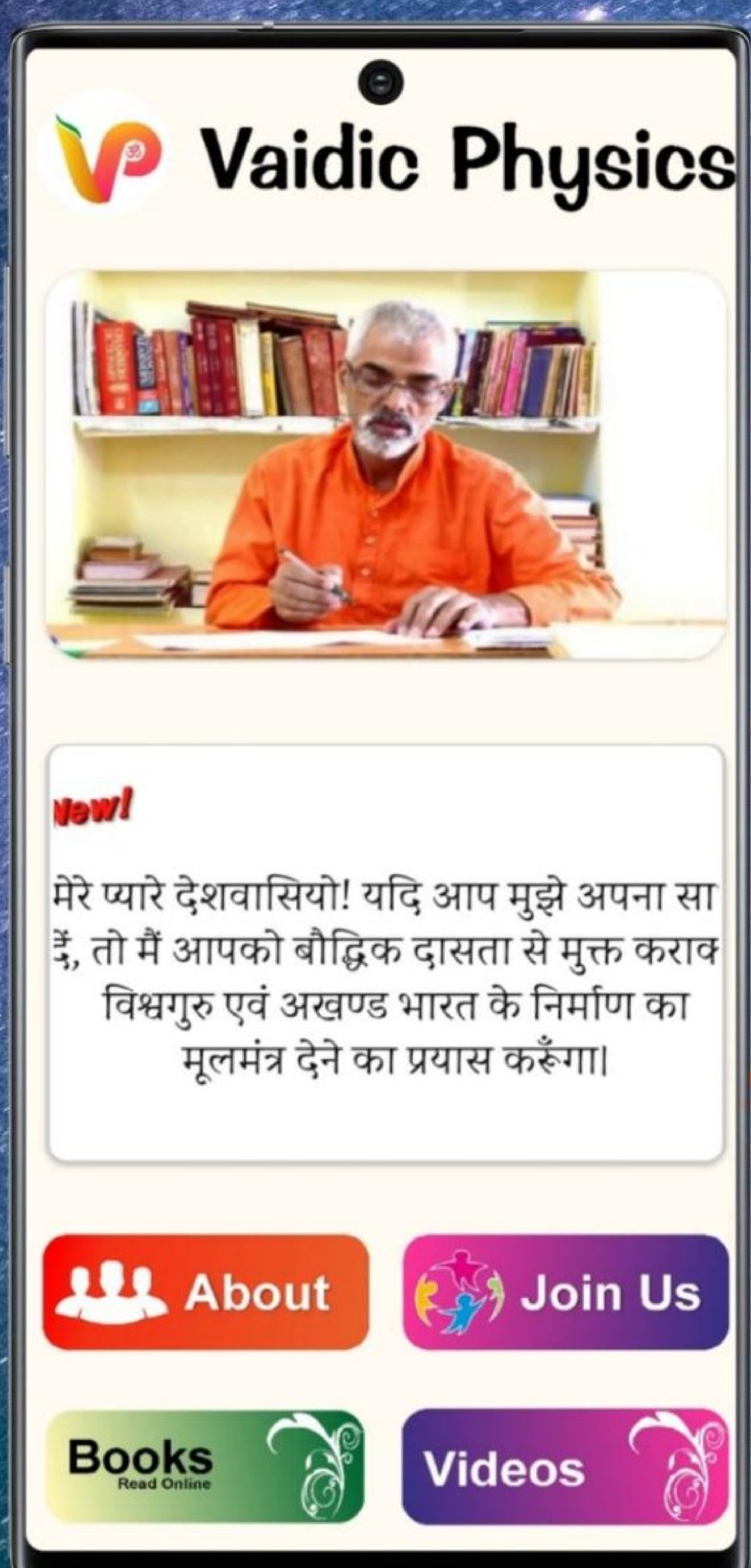
aryavartregenerator

aryaresearcher

aryaresearcher

aryaresearcher





vaidicphysics

vaidic-physics

vaidicphysics

vaidicphysics